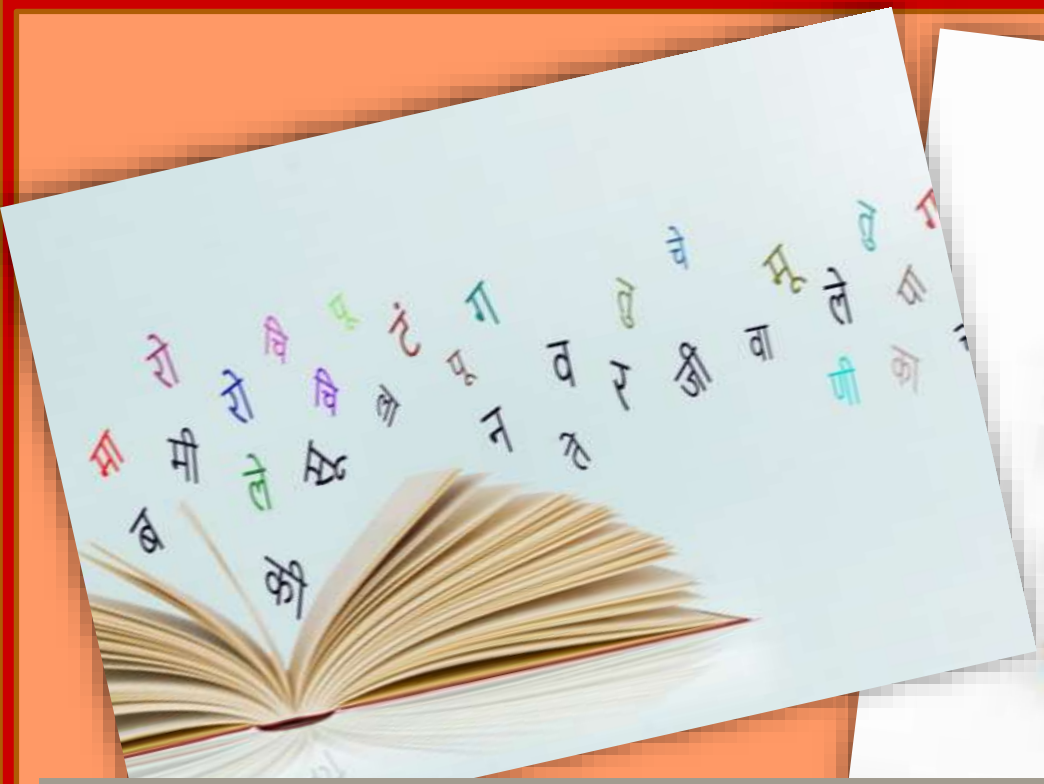

श्रुत ज्ञान

Presentation Developed By: श्रीमति सारिका छाबड़ा

www.JainKosh.org

अत्थादो अत्थंतर-मुवलंभं तं भणंति सुदणाणं।
आभिणिबोहियपुव्वं, णियमेणिह सद्दजं पमुहं॥315॥

- अर्थ - मतिज्ञान के विषयभूत पदार्थ से भिन्न पदार्थ के ज्ञान को श्रुतज्ञान कहते हैं।
- यह ज्ञान नियम से मतिज्ञानपूर्वक होता है।
- इस श्रुतज्ञान के अक्षरात्मक और अनक्षरात्मक अथवा शब्दजन्य और लिंगजन्य इस तरह से दो भेद हैं, किन्तु इनमें शब्दजन्य श्रुतज्ञान मुख्य है ॥315॥

www.JainKosh.org

श्रुतज्ञान

मतिज्ञान के द्वारा निश्चित किए पदार्थ का अवलंबन करके

उस पदार्थ से संबंधित

अन्य किसी पदार्थ को जो जानता है,

उसे श्रुतज्ञान कहते हैं ।

आमरस

आम

आम
पाक

www.JainKosh.org

श्रुतज्ञान

यह श्रुतज्ञान मतिज्ञानपूर्वक होता है ।

श्रुतज्ञानावरण और वीर्यान्तराय कर्म का क्षयोपशम से श्रुतज्ञान उत्पन्न होता है ।

www.JainKosh.org

www.JainKosh.org

	अनक्षरात्मक	अक्षरात्मक
स्वामी	एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय तक	सिर्फ पंचेन्द्रिय
प्रमुखता	इससे कुछ व्यवहार प्रवृत्ति नहीं, इसलिए प्रमुख नहीं	सर्व व्यवहार (लेन-देन, शास्त्र पठनादि) का मूल इसलिए प्रमुख
उदाहरण	शीतल पवन के स्पर्श से शीतल पवन का जानना - मतिज्ञान	"जीव अस्ति" – ऐसा शब्द सुना - मतिज्ञान
	ये वायु की प्रकृति वाले को हितकारी नहीं - श्रुतज्ञान	जीव पदार्थ का ज्ञान हुआ - श्रुतज्ञान

ainKosh.c

लोगाणमसंखमिदा, अणक्खरप्पे हवंति छट्ठाणा। वेरूवछट्ठवग्गपमाणं रूउणमक्खरगं॥316॥

- अर्थ - षट्स्थानपतित वृद्धि की अपेक्षा से पर्याय एवं पर्यायसमासरूप अनक्षरात्मक श्रुतज्ञान के सबसे जघन्य स्थान से लेकर उत्कृष्ट स्थान पर्यन्त असंख्यात लोकप्रमाण भेद होते हैं।
- द्विरूपवर्गधारा में छट्ठे वर्ग का जितना प्रमाण है (एकट्ठी) उसमें एक कम करने से जितना प्रमाण बाकी रहे उतना ही अक्षरात्मक श्रुतज्ञान का प्रमाण है ॥316॥

www.JainKosh.org

श्रुतज्ञान के भेद

	अनक्षरात्मक श्रुतज्ञान	अक्षरात्मक श्रुतज्ञान
भेद नाम	पर्याय, पर्यायसमास	अक्षर, अक्षरसमास से लेकर पूर्वसमास तक
भेदों की संख्या	असंख्यात लोकप्रमाण भेदसहित असंख्यात लोकप्रमाण षट्स्थान	एक कम एकट्ठी प्रमाण $2^{64} - 1$

पज्जायक्खरपदसंघादं पडिवत्तियाणिजोगं च।
दुगवारपाहुडं च य, पाहुडयं वत्थु पुव्वं च॥317॥
तेसिं च समासेहि य, वीसविहं वा हु होदि सुदणाणं।
आवरणस्स वि भेदा, तत्तियमेत्ता हवंति त्ति॥318॥

- अर्थ - पर्याय, पर्यायसमास, अक्षर, अक्षरसमास, पद, पदसमास, संघात, संघातसमास, प्रतिपत्तिक, प्रतिपत्तिकसमास, अनुयोग, अनुयोगसमास, प्राभृतप्राभृत, प्राभृतप्राभृतसमास, प्राभृत, प्राभृतसमास, वस्तु, वस्तुसमास, पूर्व, पूर्वसमास – इस तरह श्रुतज्ञान के बीस भेद हैं।
- इस ही कारण श्रुतज्ञानावरण कर्म के भेद भी बीस ही होते हैं ॥317-318॥

www.JainKosh.org

1	पर्याय	2	पर्यायसमास
3	अक्षर	4	अक्षरसमास
5	पद	6	पदसमास
7	संघात	8	संघातसमास
9	प्रतिपत्तिक	10	प्रतिपत्तिकसमास
11	अनुयोग	12	अनुयोगसमास
13	प्राभृत-प्राभृत	14	प्राभृत-प्राभृतसमास
15	प्राभृत	16	प्राभृतसमास
17	वस्तु	18	वस्तुसमास
19	पूर्व	20	पूर्वसमास

नोट–श्रुतज्ञान के 20 भेद हैं, इसलिए श्रुतज्ञानावरण के भेद भी 20 हैं ।

www.JainKosh.org

णवरि विसेसं जाणे, सुहुमजहण्णं तु पज्जयं णाणं ।
पज्जायावरणं पुण, तदणंतरणाणभेदम्हि॥319॥

- अर्थ - सूक्ष्म निगोदिया लब्ध्यपर्याप्तक के जो सबसे जघन्य ज्ञान होता है उसको पर्याय ज्ञान कहते हैं।
- इसमें विशेषता केवल यही है कि इसके आवरण करनेवाले कर्म के उदय का फल इसमें (पर्याय ज्ञान में) नहीं होता, किन्तु इसके अनन्तर ज्ञान (पर्यायसमास) के प्रथम भेद में ही होता है॥319॥

www.JainKosh.org

पर्याय ज्ञान

जो सबसे जघन्य श्रुतज्ञान है, वह पर्याय ज्ञान है ।

पर्याय श्रुतज्ञानावरण के सर्वघाति स्पर्धकों का <u>उदयाभावी क्षय,</u>

इन्हीं का सद्-अवस्थारूप <u>उपशम</u> होने पर

जो ज्ञान होता है, उसे पर्याय श्रुतज्ञान कहते हैं ।

पर्याय श्रुतज्ञान का क्षयोपशम सर्व जीवों के पाया जाता है ।

अर्थात् इस पर्याय श्रुतज्ञानावरण के सर्वघाति स्पर्धकों का उदय कभी आता ही नहीं ।

यदि आ जावे तो जीव के ज्ञान का ही अभाव होवे ।

ज्ञान के अभाव में जीव का भी अभाव होगा ।

www.JainKosh.org

सुहुमणिगोदअपज्जत्तयस्स जादस्स पढमसमयम्हि।
हवदि हु सव्वजहण्णं, णिच्चुग्घाडं णिरावरणं॥320॥

- अर्थ - सूक्ष्म निगोदिया लब्ध्यपर्याप्तक जीव के उत्पन्न होने के प्रथम समय में सबसे जघन्य ज्ञान होता है। इसी को पर्याय ज्ञान कहते हैं।
- इतना ज्ञान हमेशा निरावरण तथा प्रकाशमान रहता है॥320॥

www.JainKosh.org

कैसा है पर्याय ज्ञान ?

नित्य - उद्घाट	• सदाकाल प्रकाशमान
निरावरण	• इतने ज्ञान का कभी आच्छादन नहीं होता
स्वामी	• सूक्ष्म निगोदिया लब्ध्यपर्याप्तक जीव

www.JainKosh.org

सुहमणिगोदअपज्जत्तगेसु सगसंभवेसु भमिऊण। चरिमापुण्णतिवक्का-णादिमवक्कट्ठियेव हवे॥321॥

- अर्थ - सूक्ष्मनिगोदिया लब्ध्यपर्याप्तक जीव के अपने जितने भव (छह हजार बारह) संभव हैं
- उनमें भ्रमण करके अन्त के अपर्याप्त शरीर को तीन मोड़ाओं के द्वारा ग्रहण करने वाले जीव के प्रथम मोड़ा के समय में यह सर्व जघन्य ज्ञान होता है ॥321॥

www.JainKosh.org

पर्याय ज्ञान का स्वामी (विशेष)

सूक्ष्म-निगोद के अपर्याप्त अवस्था के 6012 भव धारण करके

अंत के 6012 वें भव में

3 मोड़े से जन्म लेकर

जन्म के प्रथम समय (अर्थात् प्रथम मोड़ में स्थित)

सूक्ष्म निगोदिया लब्ध्यपर्याप्तक जीव को पर्याय ज्ञान होता है ।

सुहुमणिगोदअपज्जत्तयस्स जादस्स पढमसमयम्हि।
फासिंदियमदिपुव्वं, सुदणाणं लद्धिअक्खरयं॥322॥

- अर्थ - सूक्ष्मनिगोदिया लब्ध्यपर्याप्तक जीव के उत्पन्न होने के प्रथम समय में स्पर्शन इन्द्रियजन्य मतिज्ञानपूर्वक लब्ध्यक्षररूप श्रुतज्ञान होता है ॥322॥

www.JainKosh.org

पर्यायज्ञान

यह पर्यायज्ञान स्पर्शन इन्द्रिय संबंधी मतिज्ञानपूर्वक होता है ।

इस ही जीव को
जघन्य स्पर्शन मतिज्ञान और
जघन्य अचक्षुदर्शन पाया
जाता है ।

www.JainKosh.org

पर्याय श्रुतज्ञान का अन्य नाम लब्धि-अक्षर है ।

लब्धि + अक्षर	• =लब्ध्यक्षर
लब्धि	• श्रुतज्ञानावरण का क्षयोपशम या जानन शक्ति
अक्षर	• अविनाशी

अर्थात् जो श्रुतज्ञान अविनाशी है, वह लब्धि-अक्षर ज्ञान है ।

यह पर्याय ज्ञान अविनाशी है, अतः लब्धि-अक्षर कहलाता है ।

अवरुवरिम्मि अणंतमसंखं संखं च भागवड्ढीए।
संखमसंखमणंतं, गुणवड्ढी होंति हु कमेण॥323॥

- अर्थ - सर्व जघन्य पर्याय ज्ञान के ऊपर क्रम से अनंतभागवृद्धि, असंख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि, अनंतगुणवृद्धि – ये छह वृद्धियाँ होती हैं ॥323॥

www.JainKosh.org

पर्यायसमास ज्ञान

पर्याय ज्ञान से ऊपर एवं

अक्षर ज्ञान से नीचे

ज्ञान के समस्त भेद

पर्यायसमास ज्ञान हैं ।

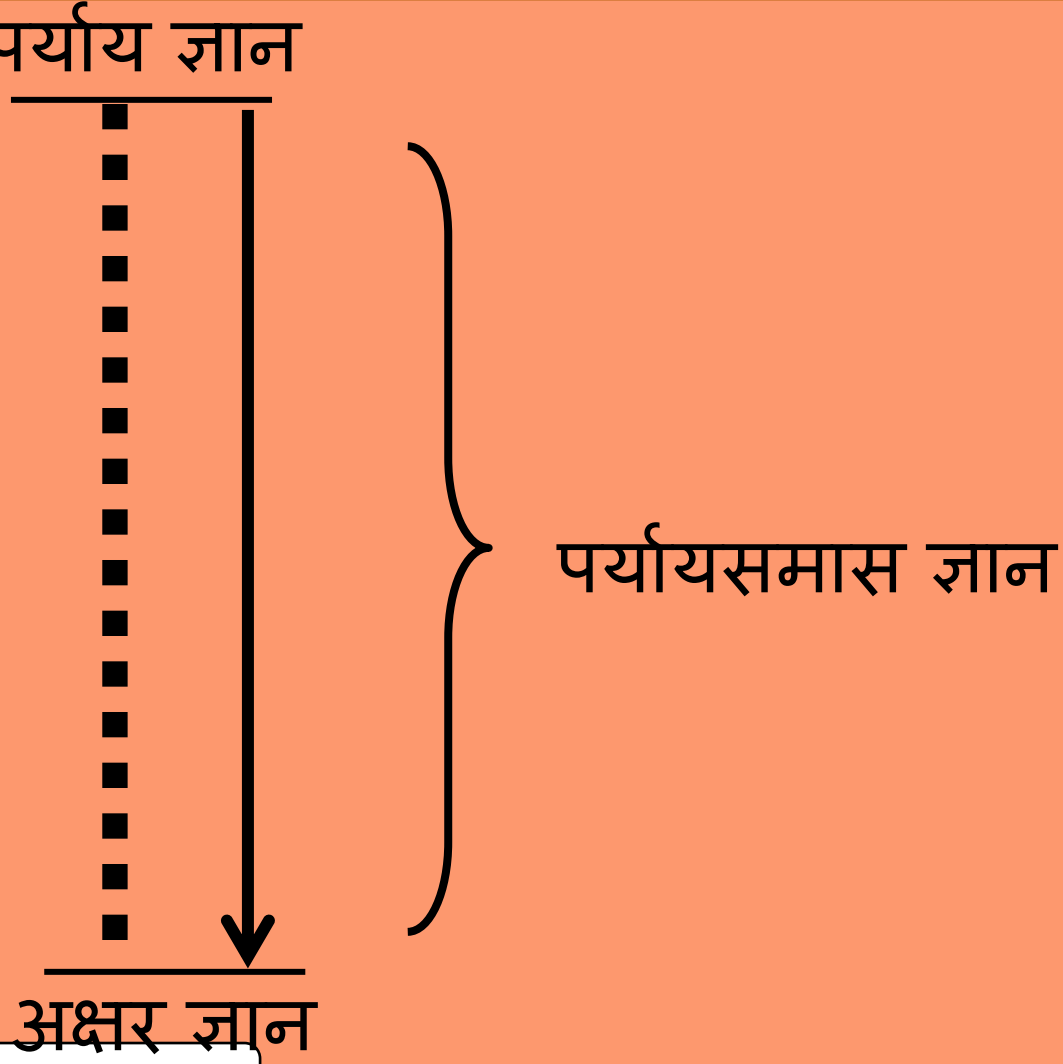

www.JainKosh.org

षट्स्थानपतित वृद्धि

भाग वृद्धि

- अनंत
- असंख्यात
- संख्यात

गुण वृद्धि

- संख्यात
- असंख्यात
- अनंत

सबसे कम वृद्धि----------बढ़ते क्रम में वृद्धि----------सबसे अधिक वृद्धि

अनन्त भागवृद्धि - उदाहरण

- मूलराशि + $\frac{\text{मूलराशि}}{\text{अनन्त}}$ = वृद्धि सहित राशि
- मानाकि अनंत = 10
- $1000 + \frac{1000}{10} = 1000 + 100 = 1100$
- तो 1000 की अनंत भागवृद्धि = 1100

असंख्यात भागवृद्धि - उदाहरण

- मूलराशि + $\frac{\text{मूलराशि}}{\text{असंख्यात}}$ = वृद्धि सहित राशि
- मानाकि असंख्यात = 5
- $1000 + \frac{1000}{5} = 1000 + 200 = 1200$
- तो 1000 की असंख्यात भागवृद्धि = 1200

संख्यात भागवृद्धि - उदाहरण

- मूलराशि + $\frac{\text{मूलराशि}}{\text{संख्यात}}$ = वृद्धि सहित राशि
- मानाकि संख्यात = 2
- $1000 + \frac{1000}{2} = 1000 + 500 = 1500$
- तो 1000 की संख्यात भागवृद्धि = 1500

गुणवृद्धियाँ - उदाहरण

संख्यात गुणवृद्धि	असंख्यात गुणवृद्धि	अनंत गुणवृद्धि
मूलराशि × संख्यात	मूलराशि × असंख्यात	मूलराशि × अनन्त
1000 × 2 = 2000	1000 × 5 = 5000	1000 × 10 = 10000
इसी प्रकार वास्तविक गणित में जानना चाहिए ।		

जीवाणं च य रासी, असंखलोगा वरं खु संखेज्जं।
भागगुणम्हि य कमसो, अवट्ठिदा होंति छट्ठाणे॥324॥

- अर्थ - समस्त जीवराशि, असंख्यात लोकप्रमाण राशि, उत्कृष्ट संख्यात राशि - ये तीन राशि पूर्वोक्त अनंतभागवृद्धि आदि छह स्थानों में भागहार और गुणाकार की क्रम से अवस्थित राशि है ॥324॥

www.JainKosh.org

भागहार और गुणकार का प्रमाण

	वास्तविक राशि	दृष्टांत
अनंत भागवृद्धि, अनंत गुणवृद्धि हेतु	समस्त जीवराशि	10
असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात गुणवृद्धि हेतु	असंख्यात लोकप्रमाण राशि	5
संख्यात भागवृद्धि, संख्यात गुणवृद्धि हेतु	उत्कृष्ट संख्यात राशि	2

उव्वंकं चउरंकं, पणछस्सत्तंक अट्ठअंकं च।
छव्वड्ढीणं सण्णा, कमसो संदिट्ठिकरणट्ठं॥325॥

- अर्थ - लघुरूप संदृष्टि के लिये क्रम से छह वृद्धियों की ये छह संज्ञाएँ हैं – अनंतभागवृद्धि की उर्वंक, असंख्यातभागवृद्धि की चतुरंक, संख्यातभागवृद्धि की पंचांक, संख्यातगुणवृद्धि की षडंक, असंख्यातगुणवृद्धि की सप्तांक, अनंतगुणवृद्धि की अष्टांक ॥325॥

www.JainKosh.org

छह प्रकार की वृद्धियों की संज्ञा और संकेत (चिह्न)

वृद्धि नाम	संज्ञा	संकेत
अनंत भागवृद्धि	उर्वंक	उ
असंख्यात भागवृद्धि	चतुरंक	४
संख्यात भागवृद्धि	पंचांक	५
संख्यात गुणवृद्धि	षडंक	६
असंख्यात गुणवृद्धि	सप्तांक	७
अनंत गुणवृद्धि	अष्टांक	८

अंगुलअसंखभागे, पुव्वगवड्ढीगदे दु परवड्ढी।
एक्कं वारं होदि हु, पुणो पुणो चरिमउड्ढित्ती॥326॥

- अर्थ - सूच्यंगुल के असंख्यातवें भागप्रमाण पूर्ववृद्धि हो जाने पर एक बार उत्तर वृद्धि होती है। यह नियम अंत की वृद्धि पर्यन्त समझना चाहिये।
- अर्थात् सूच्यंगुल के असंख्यातवें भाग बार अनंत-भागवृद्धि हो जाने पर एक बार असंख्यात-भागवृद्धि होती है।
- इसी क्रम से असंख्यात-भागवृद्धि भी जब सूच्यंगुल के असंख्यातवें भागप्रमाण हो जाए तब सूच्यंगुल के असंख्यातवें भागप्रमाण अनंत-भागवृद्धि होने पर एक बार संख्यात-भागवृद्धि होती है। इस ही तरह अंत की वृद्धि पर्यन्त जानना ॥326॥

www.JainKosh.org

वृद्धि के क्रम को समझने के लिये संकेतों का षट्स्थान यंत्र

उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ६
उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ६
उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ७
उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ६
उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ६
उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ७
उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ६
उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ६
उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ८

www.JainKosh.org

प्रथम पंक्ति - प्रथम 3 कोठे

- कांडक = $\frac{\text{सूच्यंगुल}}{\text{असंख्यात}}$
- कांडक बार अनंत भागवृद्धि होने पर एक बार असंख्यात भागवृद्धि होती है ।
- पुनः कांडक बार अनंत भागवृद्धि होने पर एक बार असंख्यात भागवृद्धि होती है ।
- ऐसे कांडक बार असंख्यात भागवृद्धि होने के पश्चात्
- कांडक बार अनंत भागवृद्धि होती है,
- फिर एक बार संख्यात भागवृद्धि होती है ।

www.JainKosh.org

प्रथम पंक्ति - मध्य के 3 कोठे

- पुनः अनंत भागवृद्धि-पूर्वक कांडक बार असंख्यात भागवृद्धि होती है,
- फिर कांडक बार अनंत भागवृद्धि होती है, तब पुनः एक बार संख्यात भागवृद्धि होती है ।
- पुनः पूर्व क्रम से अनंत भागवृद्धि, असंख्यात भागवृद्धि होने पर एक बार संख्यात भागवृद्धि होती है ।
- ऐसे कांडक बार संख्यात भागवृद्धि होती है ।

www.JainKosh.org

प्रथम पंक्ति - अंतिम 3 कोठे

- पुनः कांडक बार असंख्यात भागवृद्धि होती है,
- फिर कांडक बार अनंत भागवृद्धि होती है,
- तब एक बार संख्यात गुणवृद्धि होती है ।

द्वितीय पंक्ति

- जैसे एक बार संख्यात गुणवृद्धि हुई है, वैसे कांडक बार संख्यात गुणवृद्धि होती हैं ।

www.JainKosh.org

तृतीय पंक्ति

- पूर्व क्रम से कांडक बार संख्यात भागवृद्धि होती है,
- फिर कांडक बार असंख्यात भागवृद्धि होती है,
- फिर कांडक बार अनंत भागवृद्धि होती है,
- तब एक बार असंख्यात गुणवृद्धि होती है ।

www.JainKosh.org

मध्य की तीन पंक्तियाँ

- जैसे एक बार असंख्यात गुणवृद्धि हुई है, वैसे ही कांडक बार असंख्यात गुणवृद्धि होती है ।

सातवीं-आठवीं पंक्ति

- पुनः कांडक बार संख्यात गुणवृद्धि होती है

www.JainKosh.org

नवी पंक्ति

- कांडक बार संख्यात गुणवृद्धि के पश्चात्
- कांडक बार संख्यात भागवृद्धि होती है,
- कांडक बार असंख्यात भागवृद्धि होती है,
- फिर कांडक बार अनंत भागवृद्धि होती है,
- तब एक बार अनंत गुणवृद्धि होती है ।

www.JainKosh.org

	उ	४	५	६	७	८
उ उ ४	का	1				
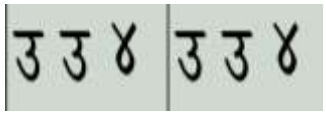	$का^2$	का				
	$का^2$ + का	का	1			
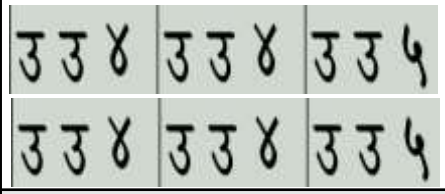	$का^3$ + $का^2$	$का^2$	का			
पहली पंक्ति	$का^3$ + $2का^2$ + का	$का^2$ + का	का	1		
दूसरी पंक्ति	$(का)^4$+ $2(का)^3$ + $(का)^2$	$का^3$ + $का^2$	$का^2$	का		
तीसरी पंक्ति	$(का)^4$+ $3(का)^3$ + $3\ (का)^2$ + का	$का^3$ + $2का^2$ + का	$का^2$ + का	का	1	

	३	४	५	६	७	८
तीसरी पंक्ति	$(का)^4 + 3(का)^3 + 3(का)^2 + का$	$का^3 + 2का^2 + का$	$का^2 + का$	का	1	
छठवी पंक्ति	$(का)^5 + 3(का)^4 + 3(का)^3 + (का)^2$	$(का)^4 + २(का)^3 + (का)^2$	$का^3 + का^2$	$का^2$	का	
आखरी पंक्ति	$(का)^5 + 4(का)^4 + 6(का)^3 + 4(का)^2 + का$	$(का)^4 + 3(का)^3 + 3(का)^2 + का$	$का^3 + 2का^2 + का$	$का^2 + का$	का	1

तीसरी पंक्ति हेतु प्रक्रिया

- का. बार ६ लाने के लिये = $(का)^2$ बार ५
- का. बार ६ लाने के लिये = $(का)^3 + (का)^2$ बार ४
- का. बार ६ लाने के लिये = $(का)^4 + 2(का)^3 + (का)^2$ बार उ
- एक बार ७ लाने के लिये = का. बार ६
- एक बार ७ लाने के लिये = $(का)^2$ + का बार ५
- एक बार ७ लाने के लिये = $(का)^3 + 2(का)^2$ + का. बार ४
- एक बार ७ लाने के लिये = $(का)^4 + 3(का)^3 + 3(का)^2$ + का. बार उ

www.JainKosh.org

छठवी पंक्ति हेतु प्रक्रिया

- का. बार ७ लाने के लिये = $(का)^2$ बार ६
- का. बार ७ लाने के लिये = $(का)^3$+ $(का)^2$ बार ५
- का. बार ७ लाने के लिये = $(का)^4$+ 2$(का)^3$ + $(का)^2$ बार ४
- का. बार ७ लाने के लिये = $(का)^5$+3 $(का)^4$ +3$(का)^3$+ $का^2$ बार उ

www.JainKosh.org

अष्टांक लाने हेतु प्रक्रिया

- एक बार ८ लाने के लिये = का बार ७
- एक बार ८ लाने के लिये = $(का)^2$ + का बार ६
- एक बार ८ लाने के लिये = $(का)^3$ +2$(का)^2$ + का बार ५
- एक बार ८ लाने के लिये = $(का)^4$+3 $(का)^3$+3$(का)^3$ + का. बार ४
- एक बार ८ लाने के लिये = $(का)^5$ +4$(का)^4$+6 $(का)^3$ +4 $(का)^2$ + का. बार उ

www.JainKosh.org

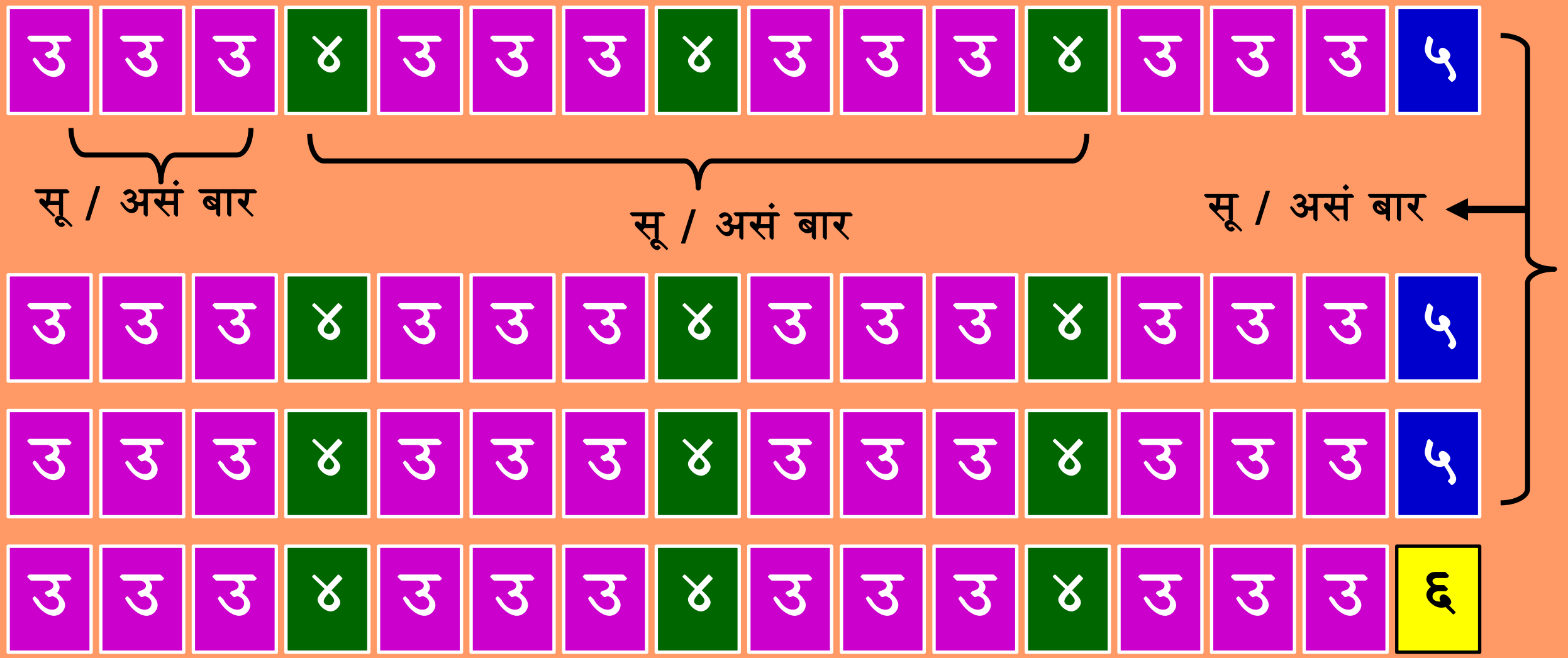

माना कि $\frac{\text{सू}}{\text{असं}} = 3$

प्रथम पंक्ति

www.JainKosh.org

प्रथम 2 पंक्तियाँ

उ उ उ उ.....का. बार ४
उ उ उ उ.....का. बार ४
⋮
उ उ उ उ.....का. बार ४
सू / असं बार
उ उ उ उ.....का. बार ५

उ उ उ उ.....का. बार ४
उ उ उ उ.....का. बार ४
⋮
उ उ उ उ.....का. बार ४
सू / असं बार

.....
सू / असं बार

४ ४ ४ ४.....का. बार ५
⋮
४ ४ ४ ४.....का. बार ५
सू / असं बार
उ उ उ उ.....का. बार ४
उ उ उ उ.....का. बार ४
⋮
उ उ उ उ.....का. बार ४
सू / असं बार
उ उ उ उ.....का. बार ६

उ उ उ उ.....का. बार ४
उ उ उ उ.....का. बार ४
⋮
उ उ उ उ.....का. बार ४
सू / असं बार
उ उ उ उ.....का. बार ५

उ उ उ उ.....का. बार ४
उ उ उ उ.....का. बार ४
⋮
उ उ उ उ.....का. बार ४
सू / असं बार
उ उ उ उ.....का. बार ५

४ ४ ४ ४.....का. बार ५
⋮
४ ४ ४ ४.....का. बार ५
सू / असं बार
उ उ उ उ.....का. बार ४
उ उ उ उ.....का. बार ४
⋮
उ उ उ उ.....का. बार ४
सू / असं बार
उ उ उ उ.....का. बार ६

www.JainKosh.org

आदिमछट्ठाणम्हि य, पंच य वड्ढी हवंति सेसेसु।
छव्वड्ढीओ होंति हु, सरिसा सव्वत्थ पदसंखा॥327॥

- अर्थ - असंख्यात लोकप्रमाण षट्स्थानों में से प्रथम षट्स्थान में पाँच ही वृद्धि होती है, अष्टांक वृद्धि नहीं होती।
- शेष सम्पूर्ण षट्स्थानों में अष्टांक सहित छहों वृद्धियाँ होती हैं।
- सूच्यंगुल का असंख्यातवाँ भाग अवस्थित है, इसलिये पदों की संख्या सब जगह सदृश ही समझनी चाहिये ॥327॥

www.JainKosh.org

षट्स्थान	वृद्धियाँ
प्रथम षट्स्थान में	5 वृद्धियाँ । (अनंत गुणवृद्धि नहीं है)
शेष सर्व षट्स्थानों में	सर्व वृद्धियाँ

सारे षट्स्थानों में स्थानों का प्रमाण सदृश ही है ।

मात्र प्रथम षट्स्थान में एक स्थान कम है ।

छट्ठाणाणं आदी, अट्ठंकं होदि चरिममुव्वंकं।
जम्हा जहण्णणाणं, अट्ठंकं होदि जिणदिट्ठं॥328॥

- अर्थ - सम्पूर्ण षट्स्थानों में आदि के स्थान को अष्टांक और अन्त के स्थान को उर्वंक कहते हैं, क्योंकि जघन्य पर्यायज्ञान भी अगुरुलघु गुण के अविभाग प्रतिच्छेदों की अपेक्षा अष्टांक प्रमाण होता है, ऐसा जिनेन्द्रदेव ने प्रत्यक्ष देखा है ॥328॥

www.JainKosh.org

षट्स्थान का

- आदिस्थान — अष्टांक
- अंतिम स्थान — उर्वंक

अर्थात् यंत्र में जब अंत में ८ दिया है, वहाँ पर से द्वितीय षट्स्थान प्रारंभ हो जाता है ।

प्रत्येक षट्स्थान में आदि ८ से होता है ।

एवं उस ८ से अनंतरपूर्व का स्थान उ का है ।

अतः अंतिम स्थान उर्वंक-रूप रहता है ।

प्रथम षट्स्थान में अष्टांक क्यों नहीं है ?

चूंकि पर्याय ज्ञान से सबसे जघन्य पर्यायसमास ज्ञान में जो वृद्धि है,
वह अनंतभागवृद्धि रूप है, अनंतगुणवृद्धिरूप नहीं है ।
अतः प्रथम षट्स्थान में अष्टांक संभव नहीं है।

www.JainKosh.org

- पर्यायज्ञान को यदि प्रथम स्थान पर रख दें । तो यह पर्याय ज्ञान ८ रूप बन जाएगा।
- प्रथम स्थान - अगुरुलघुगुण के अविभागप्रतिच्छेद से अनंतगुणा पर्याय ज्ञान,
- फिर उ वृद्धिरूप पर्यायसमास ज्ञान ।
- इस अपेक्षा प्रथम षट्स्थान में भी ८ बन सकेगा ।

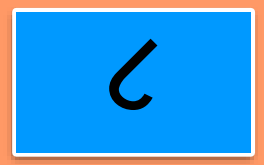

पर्यायज्ञान

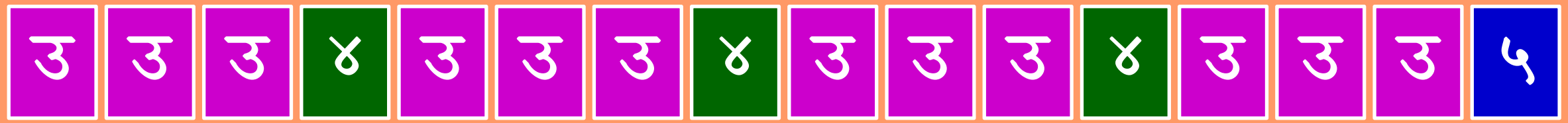

www.JainKosh.org

एक्कं खलु अट्ठंकं, सत्तंकं कंडयं तदो हेट्ठा।
रूवहियकंडएण य, गुणिदकमा जावमुव्वंकं॥329॥

- अर्थ - एक षट्स्थान में एक अष्टांक होता है और सप्तांक अर्थात् असंख्यातगुणवृद्धि, काण्डक-सूच्यंगुल के असंख्यातवें भागप्रमाण हुआ करती है।
- इसके नीचे षडंक अर्थात् संख्यातगुणवृद्धि और पंचांक अर्थात् संख्यातभागवृद्धि तथा चतुरंक-असंख्यातभागवृद्धि एवं उर्वंक-अनंतभागवृद्धि ये चार वृद्धियाँ उत्तरोत्तर क्रम से एक अधिक सूच्यंगुल के असंख्यातवें भाग से गुणित हैं ॥329॥

www.JainKosh.org

एक षट्स्थान में कौन-सी वृद्धि कितनी बार होती है?

वृद्धि	सूत्र	दृष्टान्त	
अष्टांक	1		1 बार
सप्तांक	कांडक बार अर्थात् सूच्यंगुल के असंख्यातवें भाग बार		3 बार
षडंक	पूर्व प्रमाण × (कांडक + 1)	3 × 4	12 बार
पंचांक		12 × 4	48 बार
चतुरंक		48 × 4	192 बार
उर्वंक		192 × 4	768 बार

www.JainKosh.org

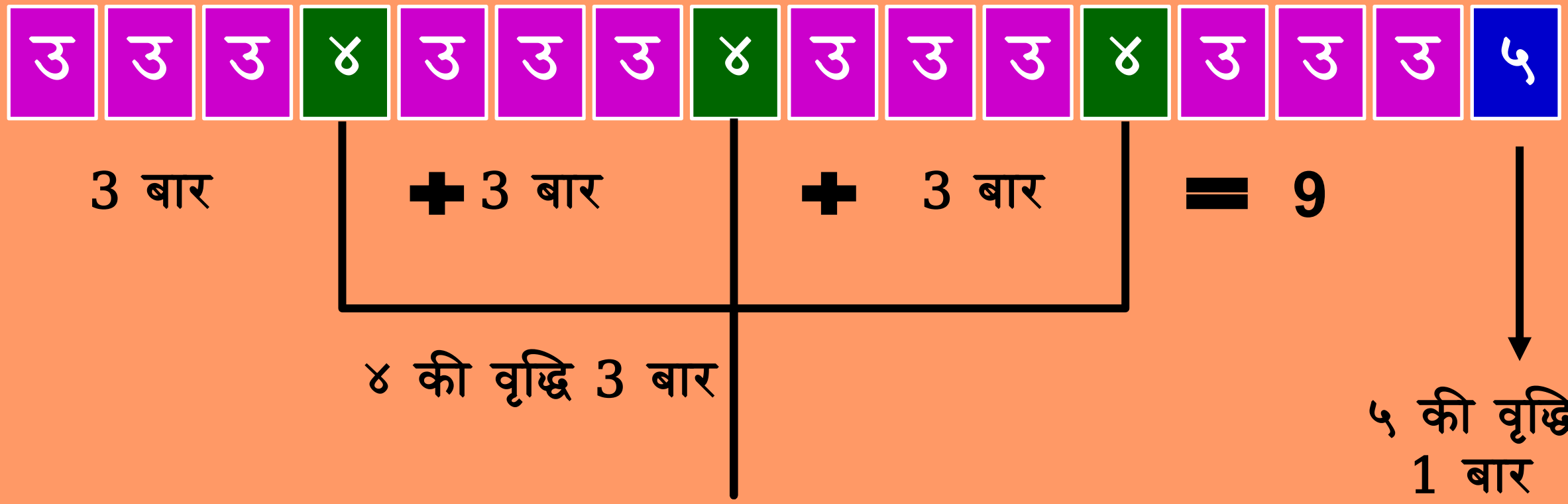

उदाहरण - एक पंक्ति की वृद्धि की गणना

www.JainKosh.org

सव्वसमासो णियमा, रूवाहियकंडयस्स वग्गस्स।
विंदस्स य संवग्गो, होदि त्ति जिणेहिं णिद्दिट्ठं॥330॥

- अर्थ - एक अधिक काण्डक के वर्ग और घन को परस्पर गुणा करने से जो प्रमाण लब्ध आवे उतना ही एक षट्स्थानपतित वृद्धियों के प्रमाण का जोड़ है, ऐसा जिनेन्द्रदेव ने कहा है ॥330॥

www.JainKosh.org

एक षट्स्थान में वृद्धियों का जोड़

$= (\text{कांडक} + 1)^2 \times (\text{कांडक} + 1)^3$

$= (\text{कांडक} + 1)^5$

उदाहरण में कांडक $=3$; तो कुल वृद्धियाँ

$=(3+1)^2 \times (3+1)^3 = (4)^2 \times (4)^3 = 1024$

वास्तविक गणित में: कुल वृद्धियाँ $= (\frac{\text{सू.}}{\partial} + 1)^5$

www.JainKosh.org

उक्कस्ससंखमेत्तं, तत्तिचउत्थेक्कदालछप्पण्णं।
सत्तदसमं च भागं, गंतूणय लद्धिअक्खरं दुगुणं॥331॥

- अर्थ - उत्कृष्ट संख्यातमात्र संख्यातभागवृद्धियों के हो जाने पर जघन्य ज्ञान में प्रक्षेपक वृद्धि के होने से लब्ध्यक्षर का प्रमाण साधिक दूना हो जाता है।
- उत्कृष्ट संख्यातमात्र पूर्वोक्त संख्यातभागवृद्धि के स्थानों में से तीन-चौथाई भागप्रमाण स्थानों के हो जाने पर प्रक्षेपक और प्रक्षेपक-प्रक्षेपक इन दो वृद्धियों के जघन्य ज्ञान के ऊपर हो जाने से लब्ध्यक्षर का प्रमाण साधिक दूना हो जाता है।
- पूर्वोक्त संख्यातभागवृद्धियुक्त उत्कृष्ट संख्यातमात्र स्थानों के छप्पन भागों में से इकतालीस भागों के बीत जाने पर प्रक्षेपक और प्रक्षेपक-प्रक्षेपक की वृद्धि होने से साधिक (कुछ अधिक) जघन्य का दूना प्रमाण हो जाता है। अथवा
- संख्यातभागवृद्धि के उत्कृष्ट संख्यातमात्र स्थानों में से दशभाग में सातभाग प्रमाण स्थानों के अनन्तर प्रक्षेपक, प्रक्षेपक-प्रक्षेपक के तथा पिशुली इन तीन वृद्धियों को साधिक जघन्य के ऊपर करने से साधिक जघन्य का प्रमाण दूना होता है ॥331॥

www.JainKosh.org

जघन्य ज्ञान से दुगुणा ज्ञान कब होता है ?

क्र.	जघन्य ज्ञान से कितना आगे जाने पर?	क्या जोड़ना
1	उत्कृष्ट संख्यात बार संख्यात भागवृद्धि होने पर	प्रक्षेपक
2	उत्कृष्ट संख्यात के $\frac{3}{4}$ स्थान बार संख्यात भागवृद्धि होने पर	प्रक्षेपक, प्रक्षेपक-प्रक्षेपक
3	उत्कृष्ट संख्यात के $\frac{41}{56}$ स्थान बार संख्यात भागवृद्धि होने पर	प्रक्षेपक, प्रक्षेपक-प्रक्षेपक
4	उत्कृष्ट संख्यात के $\frac{7}{10}$ स्थान बार संख्यात भागवृद्धि होने पर	प्रक्षेपक, प्रक्षेपक-प्रक्षेपक, पिशुलि

उदाहरण

- माना कि जघन्य ज्ञान = 50000 । संख्यात भागवृद्धि का भागहार = उत्कृष्ट संख्यात = 10
- प्रथम बार संख्यात भागवृद्धि होने पर $\frac{50000}{10}$ = 5000 की वृद्धि हुई ।
- दूसरी बार संख्यात भागवृद्धि होने पर $\frac{50000}{10}$ = 5000 की वृद्धि हुई ।
- ऐसे 10 बार संख्यात भागवृद्धि होने पर 5000 +5000 + 5000 + ... = 50000 की वृद्धि हुई ।

www.JainKosh.org

- इस स्थान पर जघन्य से दुगुनी वृद्धि हो गई । (50000 + 50000 = 100000)
- इसलिए यह कहा है कि उत्कृष्ट संख्यात बार संख्यात भागवृद्धि होने पर जघन्य ज्ञान दुगुना हो जाता है ।

- यह दुगुनी वृद्धि भी बीच की अनंत भागवृद्धि, असंख्यात भागवृद्धि तथा वृद्धियों की वृद्धि छोड़कर बताई है । वृद्धियों की वृद्धि मिलाने पर जघन्य से दुगुना और भी पहले हो जाएगा ।

www.JainKosh.org

एवं असंखलोगा, अणक्खरप्पे हवंति छट्ठाणा।
ते पज्जायसमासा, अक्खरगं उवरि वोच्छामि॥332॥

- अर्थ - इसप्रकार अनक्षरात्मक श्रुतज्ञान में असंख्यात लोकप्रमाण षट्स्थान होते हैं। ये सब ही पर्यायसमास ज्ञान के भेद हैं। अब इसके आगे अक्षरात्मक श्रुतज्ञान का वर्णन करेंगे ॥332॥

www.JainKosh.org

पर्यायसमास के कुल कितने षट्स्थान होंगे?

- $(\overset{\text{सू.}}{\partial} + 1)^5$ प्रमाण स्थानों में 1 षट्स्थान होता है ।
- तो $\equiv \partial$ प्रमाण पर्यायसमास भेदों में कितने षट्स्थान होंगे ?

- $\frac{1}{(\overset{\text{सू.}}{\partial}+1)^5} \times \equiv \partial \quad => \quad \overset{\equiv \partial}{\partial} \quad => \quad \equiv \partial$
- याने पर्यायसमास ज्ञानरूप अनक्षरात्मक ज्ञान के $\equiv \partial$ (असंख्यात लोक प्रमाण) षट्स्थान बनते हैं ।

www.JainKosh.org

चरिमुव्वंकेणवहिद-अत्थक्खरगुणिदचरिममुव्वंकं।
अत्थक्खरं तु णाणं, होदि त्ति जिणेहिं णिद्दिट्ठं॥333॥

- अर्थ - अन्त के उर्वंक का अर्थाक्षरसमूह में भाग देने से जो लब्ध आवे उसको अन्त के उर्वंक से गुणा करने पर अर्थाक्षर ज्ञान का प्रमाण होता है ऐसा जिनेन्द्रदेव ने कहा है ॥333॥

www.JainKosh.org

सर्वोत्कृष्ट पर्यायसमास ज्ञान × अनंत

अंतिम षट्स्थान का अंतिम उर्वंक × अनंत

= अर्थाक्षर ज्ञान

नोट - यहाँ अनंत गुणवृद्धि के लिए अनंत का प्रमाण जीवराशि नहीं है । यथायोग्य अनंत है ।

www.JainKosh.org

गुणकार का प्रमाण - उदाहरण

- जैसे अंतिम पर्यायसमास ज्ञान = 4096
- अक्षर श्रुतज्ञान = 131072
- तो अक्षर श्रुतज्ञान निकालने हेतु गुणकार = $\frac{\text{अर्थाक्षर}}{\text{अंतिम उर्वंक}}$
- $\frac{131072}{4096} = 32$
- इस 32 गुणकार को अंतिम पर्यायसमास ज्ञान में गुणा करने पर अक्षर श्रुतज्ञान होता है । $4096 \times 32 = 131072$
- इसी प्रकार वास्तविक गणित में गुणकार अनंतरूप जानना । इस अनंत को अंतिम उर्वंक से गुणा करने पर अर्थाक्षर ज्ञान का प्रमाण आता है ।

अर्थाक्षर ज्ञान

1) अक्षर से उत्पन्न हुआ अर्थ को विषय करने वाला ज्ञान अर्थाक्षर ज्ञान है ।

2) श्रुतकेवलज्ञान के संख्यातवे भाग से जिसका निश्चय किया जाता है, उसे अर्थ कहते हैं। अविनाशी होने से ऐसा अर्थ ही अक्षर है । उसका ज्ञान अर्थाक्षर ज्ञान है ।

www.JainKosh.org

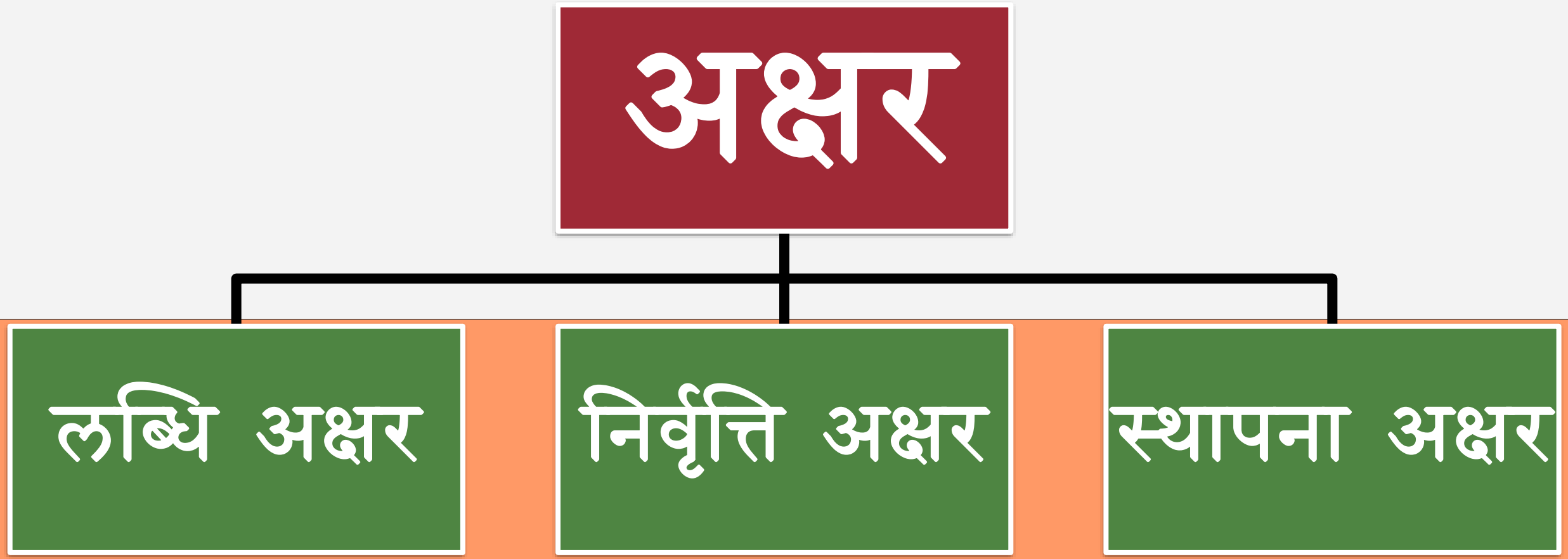

अक्षर

- लब्धि अक्षर
- निर्वृत्ति अक्षर
- स्थापना अक्षर

यहाँ अक्षर ज्ञान से तात्पर्य लब्धि-अक्षर से है ।

लब्धि अक्षर

लब्धि = पर्यायज्ञानावरण से लेकर पूर्वसमासज्ञानावरण के क्षयोपशम से उत्पन्न पदार्थों को जानने की शक्ति ।

अक्षर = अविनाश ।

जो अविनाशी लब्धि है, वह लब्धि-अक्षर है ।

निर्वृत्ति अक्षर

- तालु, कंठ आदि के प्रयत्न द्वारा उत्पन्न होने वाला अकारादि स्वर, व्यंजन, संयोगी अक्षर निर्वृत्ति-अक्षर है ।

स्थापना अक्षर

- अकारादि का आकार लिखना स्थापना अक्षर है ।

www.JainKosh.org

पण्णवणिज्जा भावा, अणंतभागो दु अणभिलप्पाणं।
पण्णवणिज्जाणं पुण, अणंतभागो सुदणिबद्धो॥334॥

- अर्थ - अनभिलप्य पदार्थों के अनंतवें भाग प्रमाण प्रज्ञापनीय पदार्थ होते हैं और
- प्रज्ञापनीय पदार्थों के अनंतवें भाग प्रमाण श्रुत में निबद्ध हैं ॥334॥

www.JainKosh.org

केवलज्ञान

अनभिलप्य

वचन-अगोचर

अनंत बहुभाग

प्रज्ञापनीय

दिव्यध्वनि द्वारा कहने योग्य

अनंतवें भाग मात्र

www.JainKosh.org

एयक्खरादु उवरिं, एगेगेणक्खरेण वड्ढंतो।
संखेज्जे खलु उड्ढे, पदणामं होदि सुदणाणं॥335॥

- अर्थ - अक्षरज्ञान के ऊपर क्रम से एक-एक अक्षर की वृद्धि होते-होते जब संख्यात अक्षरों की वृद्धि हो जाय तब पदनामक श्रुतज्ञान होता है।
- अक्षरज्ञान के ऊपर और पदज्ञान के पूर्व तक जितने ज्ञान के विकल्प हैं वे सब अक्षरसमास ज्ञान के भेद हैं ॥335॥

www.JainKosh.org

अक्षरसमास ज्ञान = अक्षरज्ञान + एक अक्षर

एक अक्षर का ज्ञान	अक्षर ज्ञान
2 अक्षर का ज्ञान	अक्षर-समास ज्ञान
3 अक्षर का ज्ञान	
4 अक्षर का ज्ञान	
1634,83,07,887 अक्षरों का ज्ञान	
एक पद का ज्ञान	पद ज्ञान

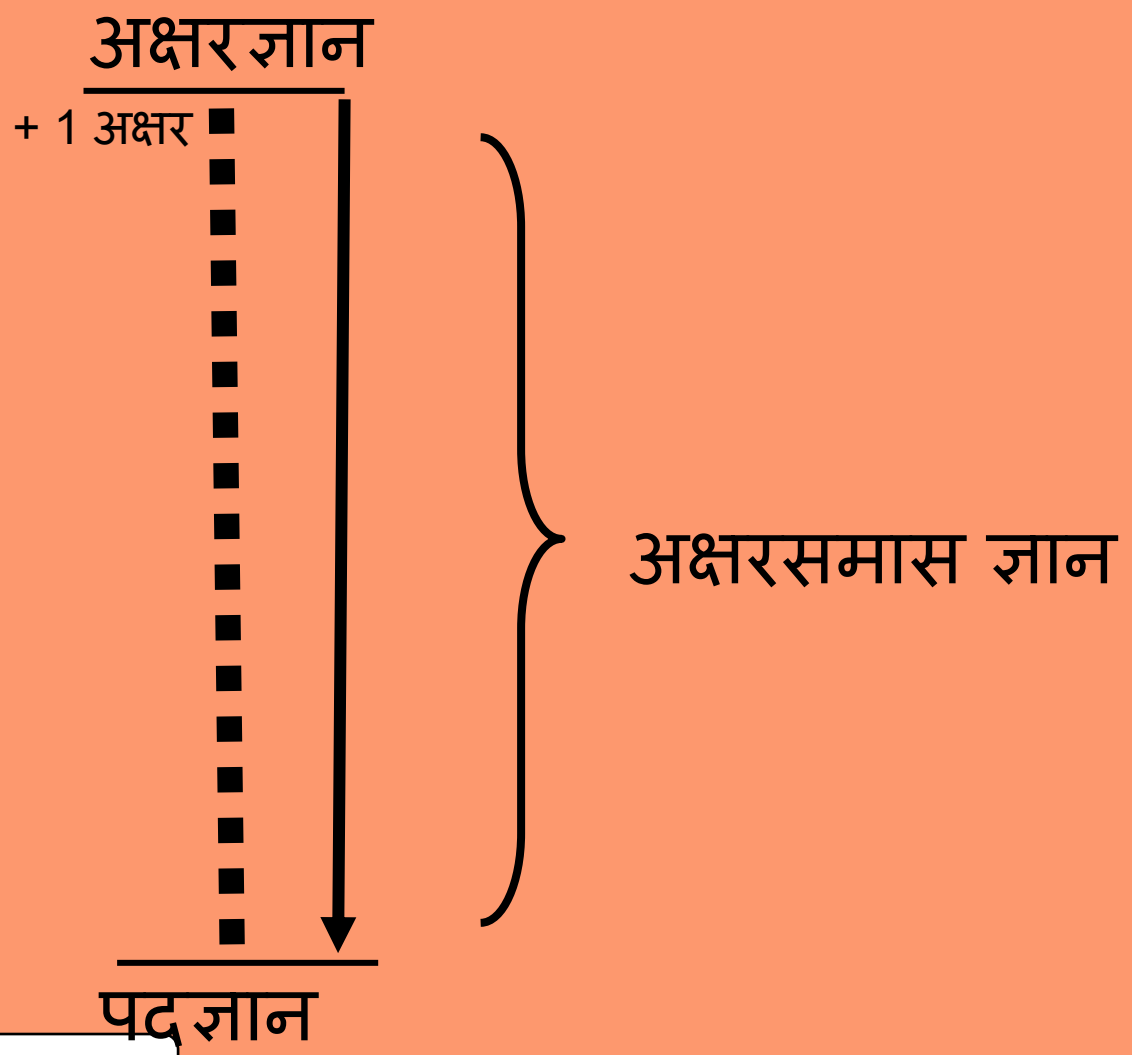

www.JainKosh.org

अक्षरसमास ज्ञान

दो, तीन आदि अक्षरों का समुदाय

सुनने के द्वारा उत्पन्न हो,

वह अक्षरसमास ज्ञान है ।

नोट: एक अक्षर से दूसरे अक्षर की ज्ञानवृद्धि षट्स्थानवृद्धि के बिना होती है ।

सोलससयचउतीसा, कोडी तियसीदिलक्खयं चेव।
सत्तसहस्साट्ठसया, अट्ठासीदी य पदवण्णा॥336॥

- अर्थ - सोलह सौ चौंतीस कोटि तिरासी लाख सात हजार आठ सौ अठासी (1634,83,07,888) एक पद में अक्षर होते हैं ॥336॥

www.JainKosh.org

पद ज्ञान

उत्कृष्ट अक्षरसमास ज्ञान में

एक अक्षर बढ़ने से

उत्पन्न हुआ श्रुतज्ञान

पद नामक श्रुतज्ञान है ।

पद का प्रमाण = 1634,83,07,888
अपुनरुक्त अक्षरों का समुदाय

www.JainKosh.org

Note

- यहाँ शब्द का नाम भी अक्षर ही है । याने अ, आ, क्, ख् आदि तो अक्षर हैं ही, परन्तु 'जीव, उत्पाद, ध्रुव, जिन' आदि शब्द भी संयोगी अक्षर ही कहलाते हैं ।
- ऐसे अपुनरुक्त अक्षरों का समुदाय पद ज्ञान है ।
- अपुनरुक्त अर्थात् जो जिन वर्णों का समूह पूर्व में नहीं आया है, बिल्कुल नवीन है, Non-repeated हैं, वह अपुनरुक्त है । जैसे वीर, दृष्टा, योग आदि अक्षर अपुनरुक्त हैं । महावीर, व्यय, आत्मा आदि अक्षर पुनरुक्त हैं ।

www.JainKosh.org

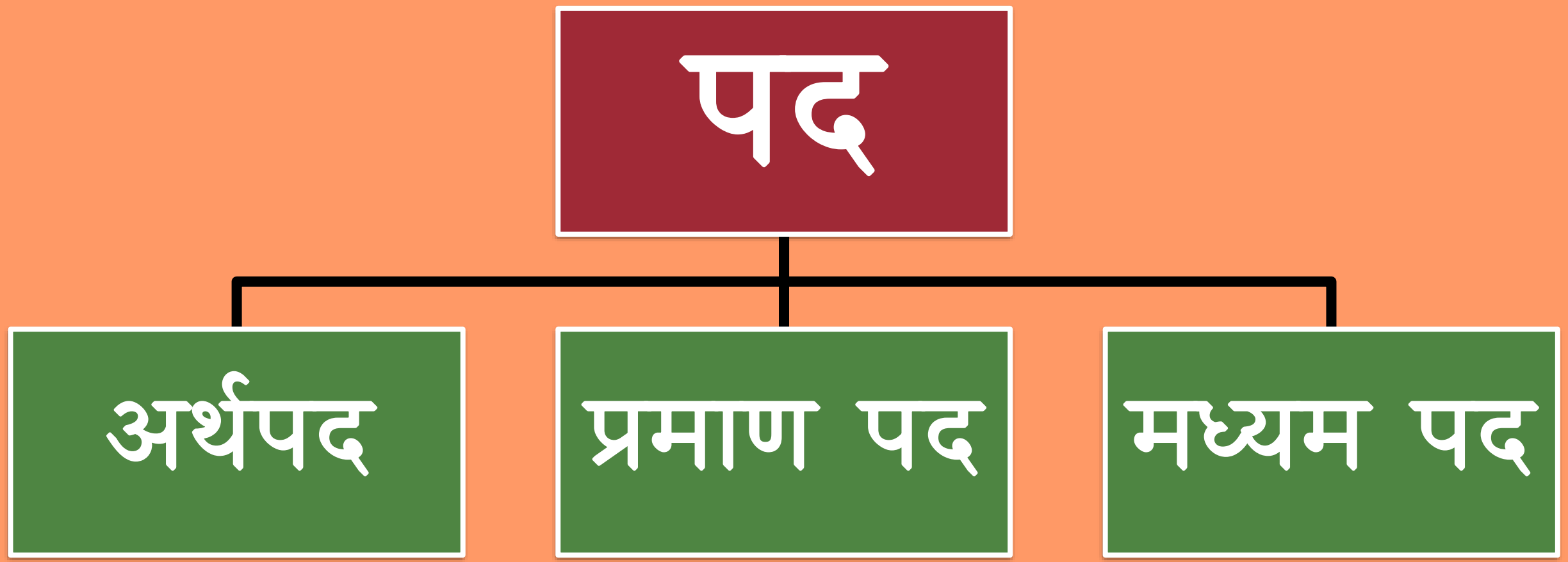

www.JainKosh.org

अर्थपद

- जिन अक्षरों के समूह द्वारा विवक्षित अर्थ जानते हैं, वह अर्थपद है ।
- जैसे 'कोऽसौ जीवः' - यहाँ कः, असौ, जीवः ये 3 पद हुए ।

प्रमाण पद

- एक निश्चित संख्या वाले अक्षरों का समूह ।
- जैसे अनुष्टुप छंद के 4 पद हैं जिसमें प्रत्येक पद के 8 अक्षर होते हैं ।
- 'नमः श्रीवर्धमानाय'

मध्यम पद

- 1634,83,07,888 अपुनरुक्त अक्षरों का समूह मध्यमपद है ।

एयपदादो उवरिं, एगेगेणक्खरेण वड्ढंतो।
संखेज्जसहस्सपदे, उड्ढे संघादणाम सुदं॥337॥

- अर्थ - एक पद के आगे भी क्रम से एक-एक अक्षर की वृद्धि होते-होते संख्यात पदों की वृद्धि हो जाय उसको संघातनामक श्रुतज्ञान कहते हैं।
- एक पद के ऊपर और संघातनामक ज्ञान के पूर्व तक जितने ज्ञान के भेद हैं वे सब पदसमास के भेद हैं।
- यह संघात नामक श्रुतज्ञान चार गति में से एक गति के स्वरूप का निरूपण करनेवाले अपुनरुक्त मध्यम पदों के समूह से उत्पन्न अर्थज्ञानरूप है ॥337॥

www.JainKosh.org

पदसमास ज्ञान

एक पद से ऊपर

एक-एक अक्षर की वृद्धि होने पर

होने वाला ज्ञान पदसमास ज्ञान है ।

www.JainKosh.org

संघात श्रुतज्ञान

ऐसे 2 अक्षर, 3 अक्षर, - - -, 1 पद, - - -, 2 पद - - - - - - संख्यात हजार पदों के बढ़ने तक पदसमास ज्ञान होता है ।

इसके पश्चात् संख्यात हजार पदों के समूह का नाम <u>संघात श्रुतज्ञान</u> है ।

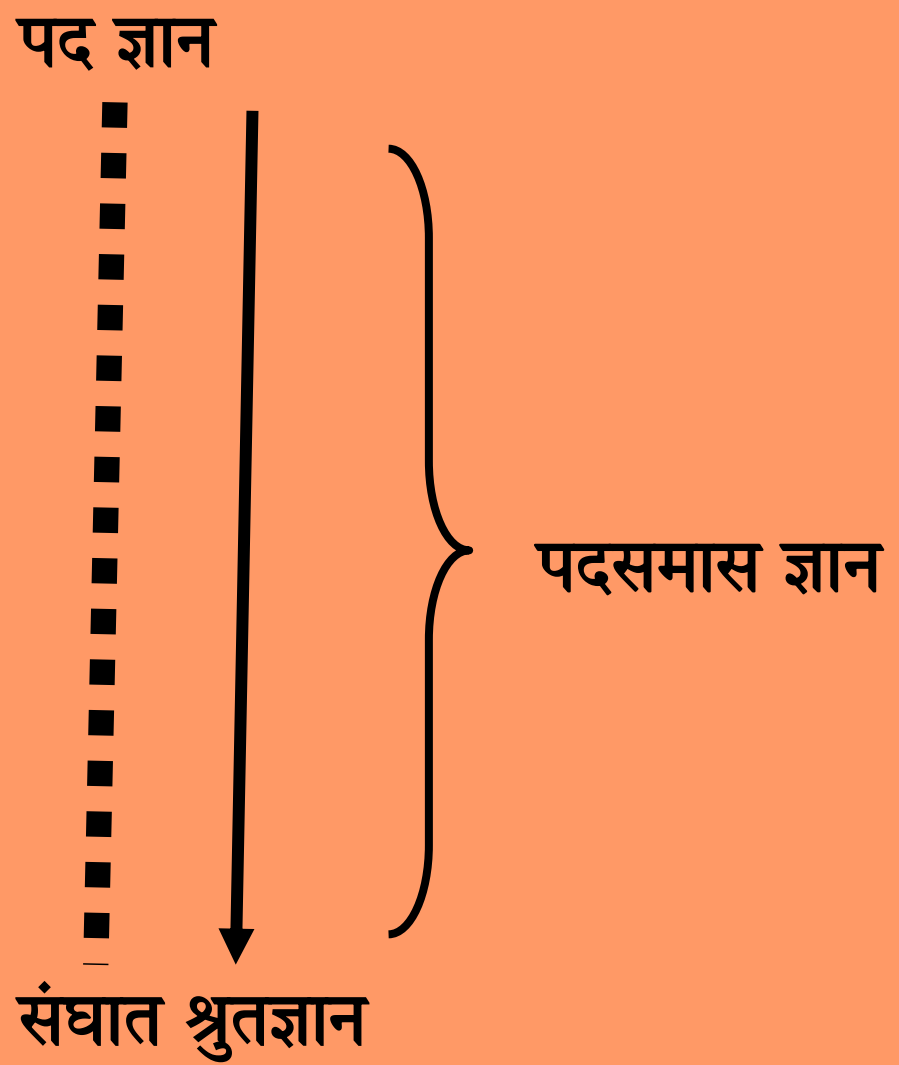

एक्कदरगदिणिरूवय-संघादसुदादु उवरि पुव्वं वा ।
वण्णे संखेज्जे संघादे उड्ढम्मि पडिवत्ती ॥338 ॥

- अर्थ - चार गति में से एक गति का निरूपण करने वाले संघात श्रुतज्ञान के ऊपर पूर्व की तरह क्रम से एक-एक अक्षर की तथा पदों और संघातों की वृद्धि होते-होते जब संख्यात संघात की वृद्धि हो जाय तब एक प्रतिपत्तिक नामक श्रुतज्ञान होता है।
- यह ज्ञान नरकादि चार गतियों का विस्तृत स्वरूप जानने वाला है।
- संघात और प्रतिपत्तिक श्रुतज्ञान के मध्य में जितने ज्ञान के विकल्प हैं उतने ही संघातसमास के भेद हैं ॥338॥

www.JainKosh.org

संघात श्रुतज्ञान

जो चार गतियों में से एक गति का स्वरूप निरूपित करता है ।

संघात + 1 अक्षर	संघातसमास
संघात + 2 अक्षर	
+ 1 पद का ज्ञान	
+ 2 पद का ज्ञान	
+ संघात + ...	दुगुणा संघात
+ संघात	तीगुणा संघात

ऐसे संख्यात संघात होने पर प्रतिपत्तिक श्रुतज्ञान होता है ।

अंतिम संघातसमास में एक अक्षर की वृद्धि होने पर प्रतिपत्तिक श्रुतज्ञान होता है ।

चउगइसरूवरूवय-पडिवत्तीदो दु उवरि पुव्वं वा।
वण्णे संखेज्जे पडिवत्तीउड्ढम्हि अणियोगं॥339॥

- अर्थ - चारों गतियों के स्वरूप का निरूपण करनेवाले प्रतिपत्तिक ज्ञान के ऊपर क्रम से पूर्व की तरह एक-एक अक्षर की वृद्धि होते-होते जब संख्यात प्रतिपत्तिक की वृद्धि हो जाय तब एक अनुयोग श्रुतज्ञान होता है।
- इसके पहले और प्रतिपत्तिक ज्ञान के ऊपर सम्पूर्ण प्रतिपत्तिकसमास ज्ञान के भेद हैं।
- अन्तिम प्रतिपत्तिकसमास ज्ञान के भेद में एक अक्षर की वृद्धि होने से अनुयोग श्रुतज्ञान होता है। इस ज्ञान के द्वारा चौदह मार्गणाओं का विस्तृत स्वरूप जाना जाता है ॥339॥

www.JainKosh.org

प्रतिपत्तिक श्रुतज्ञान

प्रतिपत्तिक + 1 अक्षर

⋮

प्रतिपत्तिक + 1 पद

⋮

प्रतिपत्तिक + 1 संघात

⋮

प्रतिपत्तिक + प्रतिपत्तिक

⋮

2 प्रतिपत्तिक + प्रतिपत्तिक

प्रतिपत्तिक समास

दुगुणा प्रतिपत्तिक

तीगुणा प्रतिपत्तिक

4 गतियों के स्वरूप का निरूपण करने वाला

www.JainKosh.org

अनुयोग श्रुतज्ञान

ऐसे संख्यातों प्रतिपत्तिक की वृद्धि होने पर अनुयोग श्रुतज्ञान होता है ।

अंतिम प्रतिपत्तिक समास में एक अक्षर की वृद्धि करने पर अनुयोग श्रुतज्ञान होता है ।

14 मार्गणाओं के स्वरूप का निरूपण करने वाला अनुयोग श्रुतज्ञान है ।

www.JainKosh.org

चोद्दसमग्गणसंजुद-अणियोगादुवरि वड्ढिदे वण्णे।
चउरादीअणियोगे, दुगवारं पाहुडं होदि॥340॥

- अर्थ - चौदह मार्गणाओं का निरूपण करनेवाले अनुयोग ज्ञान के ऊपर पूर्वोक्त क्रम के अनुसार एक-एक अक्षर की वृद्धि होते-होते जब चतुरादि अनुयोगों की वृद्धि हो जाय तब प्राभृतप्राभृत श्रुतज्ञान होता है।
- इसके पहले और अनुयोग ज्ञान के ऊपर जितने ज्ञान के विकल्प हैं वे सब अनुयोगसमास के भेद जानना ॥340॥

www.JainKosh.org

अनुयोगसमास श्रुतज्ञान

अनुयोग के ऊपर क्रम से 1-1 अक्षर की वृद्धि से पद, संघात, प्रतिपत्तिक वृद्धिपूर्वक अनुयोग वृद्धि होने पर दुगुणा अनुयोग होता है ।

www.JainKosh.org

प्राभृत-प्राभृत ज्ञान

ऐसे चार आदि अनुयोगों के पूर्व तक अनुयोग समास ज्ञान है ।

अंतिम अनुयोगसमास में एक अक्षर की वृद्धि होने पर प्राभृत-प्राभृत ज्ञान होता है ।

www.JainKosh.org

अहियारो पाहुडयं, एयट्ठो पाहुडस्स अहियारो।
पाहुडपाहुडणामं, होदि त्ति जिणेहिं णिद्दिट्ठं॥341॥

- अर्थ - प्राभृत और अधिकार ये दोनों शब्द एक ही अर्थ के वाचक हैं।
- अतएव प्राभृत के अधिकार को प्राभृतप्राभृत कहते हैं, ऐसा जिनेन्द्रदेव ने कहा है ॥341॥

www.JainKosh.org

प्राभृत	• वस्तु नामक श्रुतज्ञान का एक अधिकार
प्राभृत-प्राभृत	• प्राभृत का एक अधिकार

www.JainKosh.org

दुगवारपाहुडादो, उवरिं वण्णे कमेण चउवीसे।
दुगवारपाहुडे संउड्ढे खलु होदि पाहुडयं॥342॥

- अर्थ - प्राभृतप्राभृत ज्ञान के ऊपर पूर्वोक्त क्रम से एक-एक अक्षर की वृद्धि होते-होते जब चौबीस प्राभृतप्राभृत की वृद्धि हो जाय तब एक प्राभृत श्रुतज्ञान होता है।
- प्राभृत के पहले और प्राभृतप्राभृत के ऊपर जितने ज्ञान के विकल्प हैं वे सब ही प्राभृतप्राभृतसमास के भेद जानना।
- उत्कृष्ट प्राभृतप्राभृत समास के भेद में एक अक्षर की वृद्धि होने से प्राभृत ज्ञान होता है ॥342॥

www.JainKosh.org

ऐसे 24 प्राभृतप्राभृत के होने पर प्राभृत श्रुतज्ञान होता है ।

याने एक-एक प्राभृत में 24-24 प्राभृतप्राभृत होते हैं ।

www.JainKosh.org

वीसं वीसं पाहुड-अहियारे एक्कवत्थुअहियारो। एक्केक्कवण्णउड्ढी, कमेण सव्वत्थ णायव्वा॥343॥

- अर्थ - पूर्वोक्त क्रमानुसार प्राभृत ज्ञान के ऊपर एक-एक अक्षर की वृद्धि होते होते जब क्रम से बीस प्राभृत की वृद्धि हो जाय तब एक वस्तु नामक अधिकार पूर्ण होता है।
- वस्तु ज्ञान के पहले और प्राभृत ज्ञान के ऊपर जितने विकल्प हैं वे सब प्राभृतसमास ज्ञान के भेद हैं।
- उत्कृष्ट प्राभृतसमास में एक अक्षर की वृद्धि होने से वस्तु नामक श्रुतज्ञान पूर्ण होता है ॥343॥

www.JainKosh.org

प्राभृतसमास

प्राभृत + 1 अक्षर

⋮

+ 1 पद

⋮

+ 1 संघात

⋮

+ 1 प्रतिपत्तिक

⋮

+ 1 अनुयोग

⋮

+ 1 प्राभृतप्राभृत

⋮

+ 1 प्राभृत

प्राभृतसमास

2 प्राभृत

ऐसे 20 प्राभृतों के होने पर वस्तु श्रुतज्ञान होता है ।

अंतिम प्राभृतसमास में 1 अक्षर की वृद्धि होने पर वस्तु श्रुतज्ञान होता है ।

www.JainKosh.org

दस चोद्दसट्ठ अट्ठारसयं बारं च बार सोलं च ।
वीसं तीसं पण्णारसं च दस चदुसु वत्थूणं॥344॥

- अर्थ - पूर्वज्ञान के चौदह भेद हैं, जिनमें से प्रत्येक में क्रम से दश, चौदह, आठ, अठारह, बारह, बारह, सोलह, बीस, तीस, पन्द्रह, दश, दश, दश, दश वस्तु नामक अधिकार है ॥344॥

www.JainKosh.org

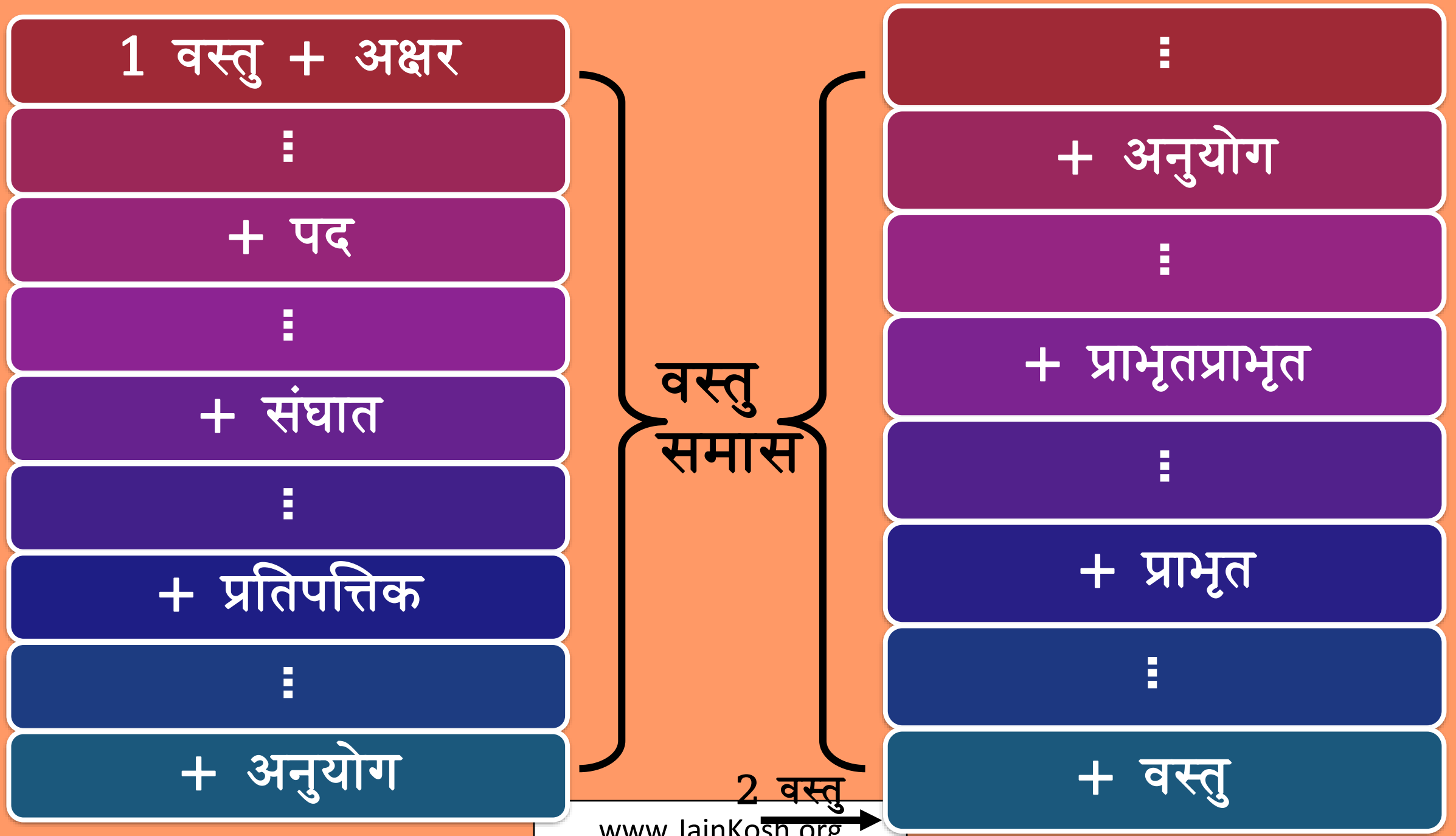
1 वस्तु + अक्षर
⋮
+ पद
⋮
+ संघात
⋮
+ प्रतिपत्तिक
⋮
+ अनुयोग
वस्तु समास
⋮
+ अनुयोग
⋮
+ प्राभृतप्राभृत
⋮
+ प्राभृत
⋮
+ वस्तु
2 वस्तु
www.JainKosh.org

ऐसी 10 वस्तुओं के होने पर पूर्व ज्ञान होता है ।

आगे 1-1 अक्षर की वृद्धि करने पर पूर्वसमास ज्ञान होता है ।

www.JainKosh.org

उप्पायपुव्वगाणिय-विरियपवादत्थिणत्थियपवादे।
णाणासच्चपवादे, आदाकम्मप्पवादे य॥345॥
पच्चक्खाणे विज्जाणुवादकल्लाणपाणवादे य।
किरियाविसालपुव्वे, कमसोथ तिलोयविंदुसारे य॥346॥

- अर्थ - उत्पाद, आग्रायणीय, वीर्यप्रवाद, अस्तिनास्तिप्रवाद, ज्ञानप्रवाद, सत्यप्रवाद, आत्मप्रवाद, कर्मप्रवाद, प्रत्याख्यान, विद्यानुवाद, कल्याणवाद, प्राणवाद, क्रियाविशाल, त्रिलोकबिन्दुसार – इस तरह से ये क्रम से पूर्वज्ञान के चौदह भेद हैं ॥345-346॥

www.JainKosh.org

कितनी वस्तुओं के होने पर कौन-सा पूर्वज्ञान होता है?

वस्तु संख्या	पूर्वज्ञान
10	उत्पाद
14	आग्रायणीय
8	वीर्यप्रवाद
18	अस्ति-नास्ति प्रवाद
12	ज्ञानप्रवाद
12	सत्यप्रवाद
16	आत्मप्रवाद

वस्तु संख्या	पूर्वज्ञान
20	कर्मप्रवाद
30	प्रत्याख्यान
15	विद्यानुवाद
10	कल्याणवाद
10	प्राणवाद
10	क्रियाविशाल
10	त्रिलोकबिन्दुसार

www.JainKosh.org

उत्पादपूर्वसमास ज्ञान

उत्पादपूर्व से ऊपर 1-1 अक्षर की वृद्धि लिए

जब तक आग्रायणी पूर्व नहीं होता,

तब तक वह उत्पादपूर्वसमास ज्ञान है ।

www.JainKosh.org

इसी प्रकार आग्रायणीय पूर्व के ऊपर

क्रम से 1-1 अक्षर की वृद्धि होने पर,

जब तक वीर्यप्रवाद नहीं होता,

तब तक आग्रायणीय पूर्वसमास ज्ञान है ।

इसी प्रकार सबमें जानना चाहिए ।

त्रिलोकबिंदुसार पूर्वसमास नहीं पाया जाता । यह अंतिम श्रुतज्ञान का भेद है ।

www.JainKosh.org

पण णउदिसया वत्थू, पाहुडया तियसहस्सणवयसया।
एदेसु चोद्दसेसु वि, पुव्वेसु हवंति मिलिदाणि॥347॥

- अर्थ - इन चौदह पूर्वों के सम्पूर्ण वस्तुओं का जोड़ एक सौ पंचानवे (195) होता है और एक-एक वस्तु में बीस-बीस प्राभृत होते हैं, इसलिये सम्पूर्ण प्राभृतों का प्रमाण तीन हजार नौ सौ (3900) होता है ॥347॥

14 पूर्व	वस्तु = 195	प्राभृत = 195×20 = 3900

www.JainKosh.org

अत्थक्खरं च पदसंघातं पडिवत्तियाणिजोगं च।
दुगवारपाहुडं च य, पाहुडयं वत्थु पुव्वं च॥348॥
कमवण्णुत्तरवड्ढिय, ताण समासा य अक्खरगदाणि।
णाणवियप्पे वीसं, गंथे बारस य चोद्दसयं॥349॥

- अर्थ - अर्थाक्षर, पद, संघात, प्रतिपत्तिक, अनुयोग, प्राभृतप्राभृत, प्राभृत, वस्तु, पूर्व - ये नव तथा क्रम से एक-एक अक्षर की वृद्धि के द्वारा उत्पन्न होनेवाले अक्षरसमास आदि नव इस तरह अठारह भेद द्रव्यश्रुत के होते हैं।
- पर्याय और पर्यायसमास के मिलाने से बीस भेद ज्ञानरूप श्रुत के होते हैं। यदि ग्रन्थरूप श्रुत की विवक्षा की जाय तो आचारांग आदि बारह और उत्पादपूर्व आदि चौदह तथा चकार से सामायिकादि चौदह प्रकीर्णक स्वरूप भेद होते हैं ॥348-349॥

www.JainKosh.org

श्रुतज्ञान

द्रव्यश्रुत

पुद्गल द्रव्यस्वरूप अक्षर, पदादिरूप

भावश्रुत

द्रव्यश्रुत के सुनने आदि से उत्पन्न हुआ श्रुतज्ञान

www.JainKosh.org

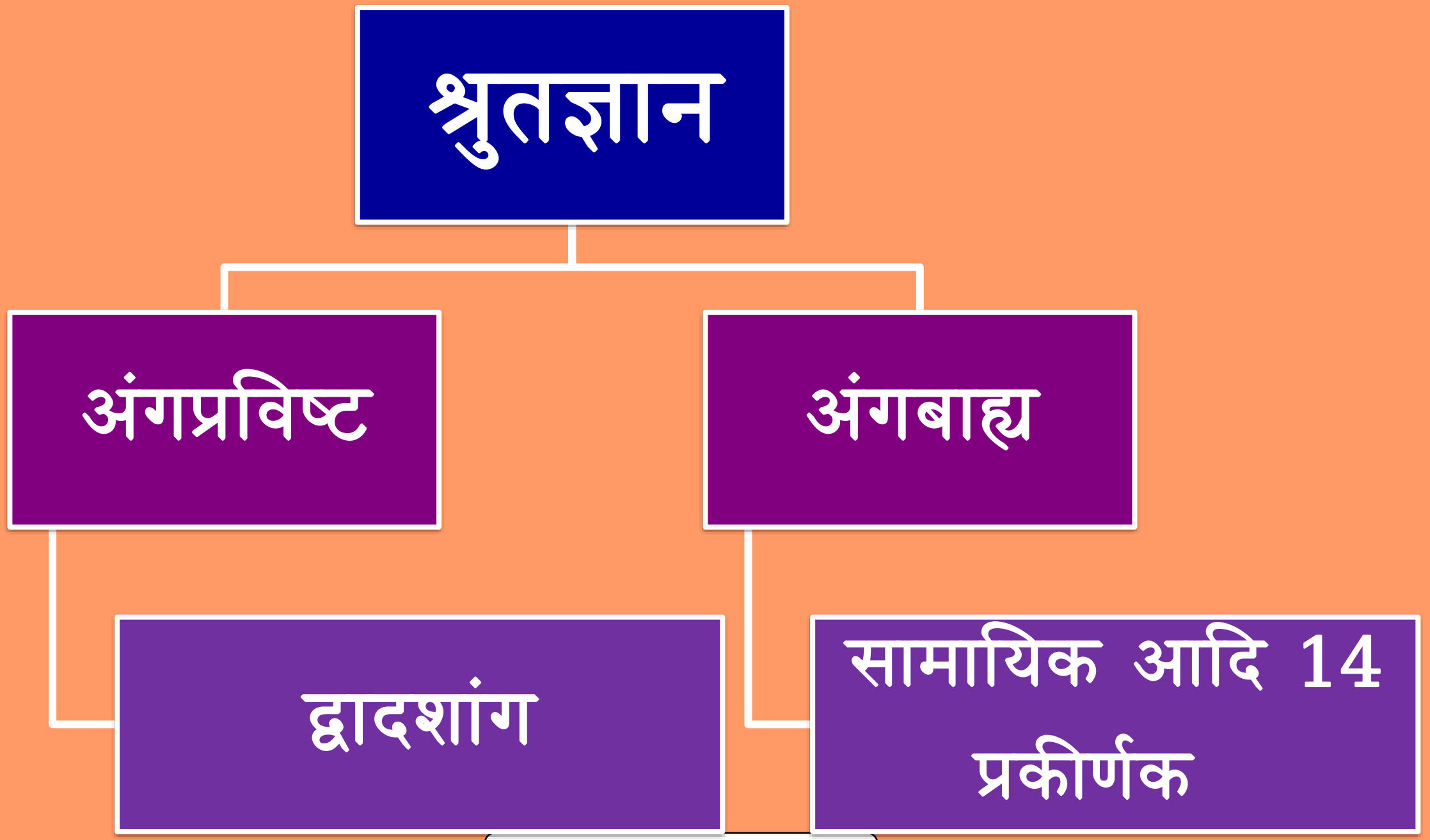

www.JainKosh.org

बारुत्तरसयकोडी, तेसीदी तह य होंति लक्खाणं।
अट्ठावण्णसहस्सा, पंचेव पदाणि अंगाणं॥350॥

- अर्थ - द्वादशांग के समस्त पद एक सौ बारह करोड़ त्र्यासी लाख अट्ठावन हजार पाँच (112,83,58,005) होते हैं ॥350॥

www.JainKosh.org

द्वादशांग के पदों की संख्या	= 112,83,58,005
1 पद का प्रमाण	= 1634,83,07,888 अक्षर

मध्यम पदों के द्वारा जो देखा जाता है, वह अंग कहलाता है ।

www.JainKosh.org

अडकोडिएयलक्खा, अट्ठसहस्सा य एयसदिगं च।
पण्णत्तरि वण्णाओ, पइण्णयाणं पमाणं तु॥351॥

- अर्थ - आठ करोड़ एक लाख आठ हजार एक सौ पचहत्तर (80108175) प्रकीर्णक (अंगबाह्य) अक्षरों का प्रमाण है ॥351॥

अंगबाह्य के अक्षरों की संख्या

8,01,08,175

www.JainKosh.org

तेत्तीस वेंजणाइं, सत्तावीसा सरा तहा भणिया।
चत्तारि य जोगवहा, चउसट्ठी मूलवण्णाओ॥352॥

- अर्थ - तेतीस व्यंजन, सत्ताईस स्वर, चार योगवाह इस तरह कुल चौंसठ मूलवर्ण होते हैं ॥352॥

33 व्यंजन + 27 स्वर + 4 योगवाह

= 64 मूलवर्ण

www.JainKosh.org

जिनवाणी के कुल अपुनरुक्त अक्षर निकालने की प्रक्रिया- 64 मूलवर्ण

33 व्यंजन (अर्ध मात्रा)

क् ख् ग् घ् ङ् = क वर्ग

च् छ् ज् झ् ञ् = च वर्ग

ट् ठ् ड् ढ् ण् = ट वर्ग

त् थ् द् ध् न् = त वर्ग

प् फ् ब् भ् म् = प वर्ग

य् र् ल् व्

श् ष् स् ह्

27 स्वर (1,2,3 मात्रा)

अ इ उ ऋ ऌ ए ऐ ओ औ

9 × 3 = 27

ह्रस्व (१ मात्रा)

दीर्घ (२ मात्रा)

प्लुत (३ मात्रा)

4 योगवाह

अनुस्वार, विसर्ग, जिह्वामूलीय, उपध्यमानीय

अं अः क प

कुल अपुनरुक्त अक्षर (एक संयोगी से लेकर 64 संयोगी तक समस्त)

$= 2^{64} - 1$

= 184467,4407370,9551615

= एक कम एकट्ठी

www.JainKosh.org

चउसट्ठिपदं विरलिय, दुगं च दाउण संगुणं किच्चा।
रूऊणं च कए पुण, सुदणाणस्सक्खरा होंति॥353॥

- अर्थ - उक्त चौंसठ अक्षरों का विरलन करके प्रत्येक के ऊपर दो अंक देकर सम्पूर्ण दो के अंकों का परस्पर गुणा करने से लब्ध राशि में एक घटा देने पर जो प्रमाण रहता है, उतने ही श्रुतज्ञान के अपुनरुक्त अक्षर होते हैं ॥353॥

www.JainKosh.org

- कुल संभव वर्ण = 64
- तो 2 को 64 बार रखकर
- परस्पर गुणा करने पर संभव भंग होते हैं ।
- जैसे अस्ति, नास्ति, अवक्तव्य ये 3 मूल शब्द हैं, तो इनके संभव भंग —
- एक संयोगी → 3 → अस्ति, नास्ति, अवक्तव्य
- दो संयोगी → 3 → अस्ति-नास्ति, अस्ति-अवक्तव्य, नास्ति-अवक्तव्य
- तीन संयोगी → 1 → अस्ति-नास्ति-अवक्तव्य
- अर्थात् 7 होते हैं
- जो कि $2 \times 2 \times 2 = 2^3 - 1 = 8 - 1 = 7$ होते हैं ।
- इसी प्रकार 64 वर्णों के संभव भंग निकालने पर
- $2^{64} - 1 = 18446744073709551615$ अपुनरुक्त अक्षर होते हैं ।

www.JainKosh.org

एकट्ठ च च य छस्सत्तयं च च य सुण्णसत्ततियसत्ता।
सुण्णं णव पण पंच य, एक्कं छक्केक्कगो य पणगं च ॥354॥

- अर्थ - परस्पर गुणा करने से उत्पन्न होने वाले अक्षरों का प्रमाण इसप्रकार है – एक आठ चार चार छह सात चार चार शून्य सात तीन सात शून्य नव पाँच पाँच एक छह एक पाँच ॥354॥

18446744073709551615

www.JainKosh.org

64 वर्णों से $2^{64} - 1$ अक्षर कैसे बनते हैं?

- वर्णों के संयोग द्वारा इतने अक्षर बन जाते हैं।
- उदाहरण में हम 10 वर्ण लेते हैं-
- क् ख् ग् घ् ङ् च् छ् ज् झ् ञ्
- (आगे इन्हें बिना हलंत के बताया है, वहां सर्वत्र हलंत सहित ही समझना)

एकसंयोगी वर्ण

- किसी दूसरे वर्ण के संयोग के बिना वह वर्ण स्वयं एकसंयोगी कहलाता है।

द्विसंयोगी वर्ण

- दो मूल वर्णों के संयोग से बनने वाला अक्षर। जैसे –
- कख, कग, कघ, कङ, कच, कछ, कज, कझ, कञ, खग इत्यादि ।

त्रिसंयोगी वर्ण

- तीन मूल वर्णों के संयोग से बनने वाला अक्षर। जैसे
- कखग, कखघ, कखङ, कखच इत्यादि ।

इसी प्रकार चतु:संयोगी, पंच संयोगी से लेकर 64 संयोगी अक्षर तक जानना चाहिए। उदाहरण में 10 संयोगी तक अक्षर होंगे ।

www.JainKosh.org

एक, द्वि, त्रि-संयोगी भंग की संख्या

जितने वर्ण हैं, उन्हें सीधी पंक्ति में लिखो -

	क	ख	ग	घ	ङ	च	छ	ज	झ	ञ
1 संयोगी भंग	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1
2 संयोगी भंग		1	2	3	4	5	6	7	8	9
3 संयोगी भंग			1	3	6	10	15	21	28	36
4 संयोगी भंग				1	4	10	20	35	56	84
5 संयोगी भंग					1	5	15	35	70	126
6 संयोगी भंग						1	6	21	56	126
7 संयोगी भंग							1	7	28	84
8 संयोगी भंग								1	8	36
9 संयोगी भंग									1	9
10 संयोगी भंग										1
कुल भंग	1	2	4	8	16	32	64	128	256	512

किसी एक स्थान में एकसंयोगी आदि निकालने के सूत्र

गच्छ = N = स्थान । जितनेवां स्थान है, उसे गच्छ कहते हैं।

एक संयोगी अक्षर = 1

दो संयोगी अक्षर = N – 1

जैसे ग के द्वि-संयोगी अक्षर निकालना है, तो ग का गच्छ 3 है ।

तो द्वि-संयोगी भंग = N – 1 = 3 – 1 = 2 होंगे । यथा गख, गक

www.JainKosh.org

तीन संयोगी अक्षर = (गच्छ – 2) का एक बार संकलन धन ।

संकलन धन = $\frac{y \times (y+1)}{1 \times 2}$

जैसे घ के तीनसंयोगी अक्षर निकालना है, तो घ का गच्छ = 4 है ।

तीनसंयोगी अक्षर = (गच्छ – 2) का एक बार संकलन धन = (4 – 2) = 2 का एक बार संकलन धन

2 का एक बार संकलन धन = $\frac{2 \times (2+1)}{1 \times 2}$ = $\frac{2 \times 3}{1 \times 2}$ = 3

घ के तीनसंयोगी अक्षर 3 हैं । यथा घगख, घगक, घखक

चारसंयोगी अक्षर = (गच्छ – 3) का दो बार संकलन धन

दो बार संकलन धन = $\frac{y \times (y+1) \times (y+2)}{1 \times 2 \times 3}$

जैसे ङ के चारसंयोगी अक्षर = (गच्छ – 3) का दो बार संकलन धन

गच्छ = 5, तो (5 – 3) का दो बार संकलन धन = 2 का दो बार संकलन धन

2 का दो बार संकलन धन = $\frac{2 \times (2+1) \times (2+2)}{1 \times 2 \times 3}$ = $\frac{2 \times 3 \times 4}{1 \times 2 \times 3}$ = 4

ङ के चारसंयोगी अक्षर 4 हैं । यथा ङघगख, ङघगक, ङघखक, ङगखक

पाँचसंयोगी अक्षर = (गच्छ – 4) का तीन बार संकलन धन

तीन बार संकलन धन = $\frac{y \times (y+1) \times (y+2) \times (y+3)}{1 \times 2 \times 3 \times 4}$

छःसंयोगी अक्षर = (गच्छ – 5) का चार बार संकलन धन

चार बार संकलन धन = $\frac{y \times (y+1) \times (y+2) \times (y+3) \times (y+4)}{1 \times 2 \times 3 \times 4 \times 5}$

ऐसे ही 64 संयोगी तक करना चाहिए ।

- किसी एक विवक्षित स्थान के सर्व भंग = 2^{N-1}
- जैसे ग के सारे भंग = $2^{3-1} = 2^2 = 4$
- ग के प्रत्येक भंग = 1, द्विसंयोगी भंग = 2, तीनसंयोगी भंग = 1 ।
- इस प्रकार कुल चार भंग हुए जो सूत्र द्वारा बताये थे ।
- ऐसे ही सर्वत्र निकालना चाहिए ।

64वे स्थान के भंग = $2^{N-1} = 2^{64-1} = 2^{63}$

सारे भंगों को जोड़ने का सूत्र

(अंतधन × 2) – आदि = $(2^{63} \times 2) - 1 = 2^{64} - 1$

याने एक कम एकट्ठी प्रमाण अक्षर अपुनरुक्त हैं ।

मज्झिमपदक्खरवहिद-वण्णा ते अंगपुव्वगपदाणि।
सेसक्खरसंखा ओ, पइण्णयाणं पमाणं तु॥355॥

- अर्थ - मध्यमपद के अक्षरों का जो प्रमाण है उसका समस्त अक्षरों के प्रमाण में भाग देने से जो लब्ध आवे उतने अंग और पूर्वगत मध्यम पद होते हैं।
- शेष जितने अक्षर रहें उतना अंगबाह्य अक्षरों का प्रमाण है ॥355॥

www.JainKosh.org

अंग प्रविष्ट के पद व अंगबाह्य के अक्षर निकालने की विधि - दृष्टान्त द्वारा

माना कि — सम्पूर्ण अक्षर = 1006 ; मध्यम पद के अक्षर = 10

कितने पद बनेंगे? $\frac{1006}{10}$

= 100 पद

शेष बचे अक्षर = 6 अक्षर

अंगप्रविष्ट

अंगबाह्य

अंगप्रविष्ट के पद व अंगबाह्य के अक्षर निकालने की विधि

$$\frac{\text{कुल अक्षर}}{1 \text{ मध्यम पद के अक्षर}} = \frac{2^{64} - 1}{1634,8307888}$$

= 112,8358005 पद

= 8,01,08,175 अक्षर

अंग प्रविष्ट

अंग बाह्य

www.JainKosh.org

आयारे सुद्दयडे, ठाणे समवायणामगे अंगे।
तत्तो विहाएपण्णत्तीए णाहस्स धम्मकहा॥356॥
तोवासयअज्झयणे, अंतयडे णुत्तरोववाददसे।
पण्हाणं वायरणे, विवायसुत्ते य पदसंखा॥357॥

- अर्थ - आचारांग, सूत्रकृतांग, स्थानांग, समवायांग, व्याख्याप्रज्ञप्ति, नाथधर्मकथांग, उपासकाध्ययनांग, अन्तःकृद्दशांग, अनुत्तरौपपादिकदशांग, प्रश्नव्याकरण और विपाकसूत्र – इन ग्यारह अंगों के पदों की संख्या क्रम से निम्नलिखित है ॥356-357॥

www.JainKosh.org

आचारांग

"कैसे चलिये ? कैसे बैठिये" आदि गणधर देव के प्रश्न के अनुसार "यतन से चलिये, बैठिये" आदि उत्तर वचन लिये मुनिश्वरों के समस्त आचरण का वर्णन

सूत्रकृतांग

ज्ञानविनय, प्रज्ञापना, कल्पाकल्प, छेदोपस्थापना, व्यवहारधर्मक्रिया व स्वसमय-परसमय का सूत्रों द्वारा वर्णन

स्थानांग

एक से लेकर उत्तरोत्तर एक-एक बढ़ते स्थानों का वर्णन, जैसे - संग्रहनय से आत्मा एक है । व्यवहारनय से संसारी, मुक्त दो प्रकार हैं ।

समवायांग

सम्पूर्ण पदार्थों के समवाय का अर्थात् सादृश्यसामान्य से द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव की अपेक्षा जीवादि पदार्थों का वर्णन । जैसे क्षेत्र समवाय-सातवें नरक का इन्द्रक बिल, जम्बूद्वीप एवं सर्वार्थसिद्धि विमान क्षेत्र से समान है

व्याख्याप्रज्ञप्ति

''जीव नित्य है कि अनित्य है'' आदि गणधर देव द्वारा तीर्थंकर के निकट किये 60 हजार प्रश्नों का वर्णन

नाथधर्मकथांग / ज्ञातृधर्मकथांग

तीर्थंकर के धर्म की कथा का अथवा जीवादि पदार्थों के स्वभाव का अथवा ''अस्ति-नास्ति'' आदि गणधर देव द्वारा किये गये प्रश्नों के उत्तरों का वर्णन

www.jainkosh.org

उपासकाध्ययनांग

श्रावक की 11 प्रतिमा एवं व्रत, शील, आचार, क्रिया, मंत्रादिक का वर्णन

अन्त:कृत्दशांग

प्रत्येक तीर्थ में उपसर्ग सहनकर निर्वाण प्राप्त करने वाले 10-10 अंत:कृत केवली का वर्णन

अनुत्तरौपपादिक दशांग

प्रत्येक तीर्थ में उपसर्ग सहनकर 5 अनुत्तर विमानों में गए 10-10 जीवों का वर्णन

प्रश्नव्याकरणांग

आक्षेपणी, विक्षेपणी, संवेजनी और निर्वेजनी नाम की 4 कथाओं का तथा तीन काल संबंधी धन-धान्य, लाभ-अलाभ, जीवित-मरण, जय-पराजय संबंधी प्रश्नों के पूछने पर उनके उपाय का वर्णन

विपाकसूत्रांग

पुण्य और पापरूप कर्मों के फलों का वर्णन

दृष्टिवादांग

363 कुवादियों के मतों एवं उनके निराकरण का वर्णन

www.JainKosh.org

अट्ठारस छत्तीसं, बादालं अडकडी अड वि छप्पण्णं।
सत्तरि अट्ठावीसं, चउदालं सोलससहस्सा॥358॥
इगिदुगपंचेयारं, तिवीसदुतिणउदिलक्ख तुरियादी।
चुलसीदिलक्खमेया, कोडी य विवागसुत्तम्हि॥359॥

- अर्थ - अठारह हजार, छत्तीस हजार, बियालीस हजार, एक लाख चौंसठ हजार, दो लाख अट्ठाईस हजार, पाँच लाख छप्पन हजार, ग्यारह लाख सत्तर हजार, तेईस लाख अट्ठाईस हजार, बानवे लाख चवालीस हजार, तिरानवे लाख सोलह हजार एवं एक करोड़ चौरासी लाख ॥358-359॥

www.JainKosh.org

क्र.	अंग का नाम	पद प्रमाण
1	आचारांग	18 हजार
2	सूत्रकृतांग	36 हजार
3	स्थानांग	42 हजार
4	समवायांग	1 लाख 64 हजार
5	व्याख्याप्रज्ञप्ति	2 लाख 28 हजार
6	नाथधर्मकथांग / ज्ञातृधर्मकथांग	5 लाख 56 हजार
7	उपासकाध्ययनांग	11 लाख 70 हजार
8	अन्त:कृत्दशांग	23 लाख 28 हजार
9	अनुत्तरौपपादिक दशांग	92 लाख 44 हजार
10	प्रश्नव्याकरणांग	93 लाख 16 हजार
11	विपाकसूत्रांग	1 करोड़ 84 लाख
	कुल जोड़	4 करोड़ 15 लाख 2 हजार
12	दृष्टिवादांग	1,08,68,56,005
	द्वादशांग के सम्पूर्ण पदों का जोड़	1,12,83,58,005

वापणनरनोनानं, एयारंगे जुदी हु वादम्हि।
कनजतजमताननमं, जनकनजयसीम बाहिरे वण्णा॥360॥

- अर्थ - पूर्वोक्त ग्यारह अंगों के पदों का जोड़ चार करोड़ पन्द्रह लाख दो हजार (41502000) होता है।
- बारहवें दृष्टिवाद अंग में सम्पूर्ण पद एक अरब आठ करोड़ अड़सठ लाख छप्पन हजार पांच (1086856005) होते हैं।
- अंगबाह्य के अक्षरों का प्रमाण आठ करोड़ एक लाख आठ हजार एक सौ पचहत्तर (80108175) है ॥360॥

www.JainKosh.org

अक्षरों से संख्या निकालने की विधि

क—1	ट—1	प—1	य—1
ख—2	ठ—2	फ—2	र—2
ग—3	ड—3	ब—3	ल—3
घ—4	ढ—4	भ—4	व—4
ङ—5	ण—5	म—5	श—5
च—6	त—6		ष—6
छ—7	थ—7		स—7
ज—8	द—8		ह—8
झ—9	ध—9		

सारे स्वर = 0; न, ञ = 0; मात्राओं का कोई अंक नहीं

11 अंगों के पदों का जोड़	= 4,15,02,000
12वे दृष्टिवाद अंग के पदों का प्रमाण	= 108,68,56,005
अंगबाह्य के अक्षर	= 8,01,08,175

www.JainKosh.org

चंदरविजंबुदीवय-दीवसमुद्दयवियाहपण्णत्ती।
परियम्मं पंचविहं, सुत्तं पढमाणिजोगमदो॥361॥

- अर्थ - बारहवें दृष्टिवाद अंग के पाँच भेद हैं – परिकर्म, सूत्र, प्रथमानुयोग, पूर्वगत, चूलिका।
- इसमें परिकर्म के पाँच भेद हैं – चन्द्रप्रज्ञप्ति, सूर्यप्रज्ञप्ति, जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति, द्वीप-सागरप्रज्ञप्ति, व्याख्याप्रज्ञप्ति।
- सूत्र का अर्थ सूचित करने वाला है। इस भेद में 'जीव अबंधक ही है, अकर्त्ता ही है,' इत्यादि क्रियावाद, अक्रियावाद, अज्ञान, विनयरूप 363 मिथ्यामतों को पूर्वपक्ष में रखकर दिखाया गया है।
- प्रथमानुयोग का अर्थ है कि प्रथम अर्थात् मिथ्यादृष्टि या अव्रतिक अव्युत्पन्न श्रोता को लक्ष्य करके जो प्रवृत्त हो। ॥361 ॥

www.JainKosh.org

पुव्वं जलथलमाया, आगासयरूवगयमिमा पंच।
भेदा हु चूलियाए, तेसु पमाणं इणं कमसो॥362॥

- अर्थ - पूर्वगत के चौदह भेद हैं ।
- चूलिका के पाँच भेद हैं - जलगता, स्थलगता, मायागता, आकाशगता, रूपगता
- अब इन चन्द्रप्रज्ञप्ति आदि में क्रम से पदों के प्रमाण को कहते हैं ॥362॥

www.JainKosh.org

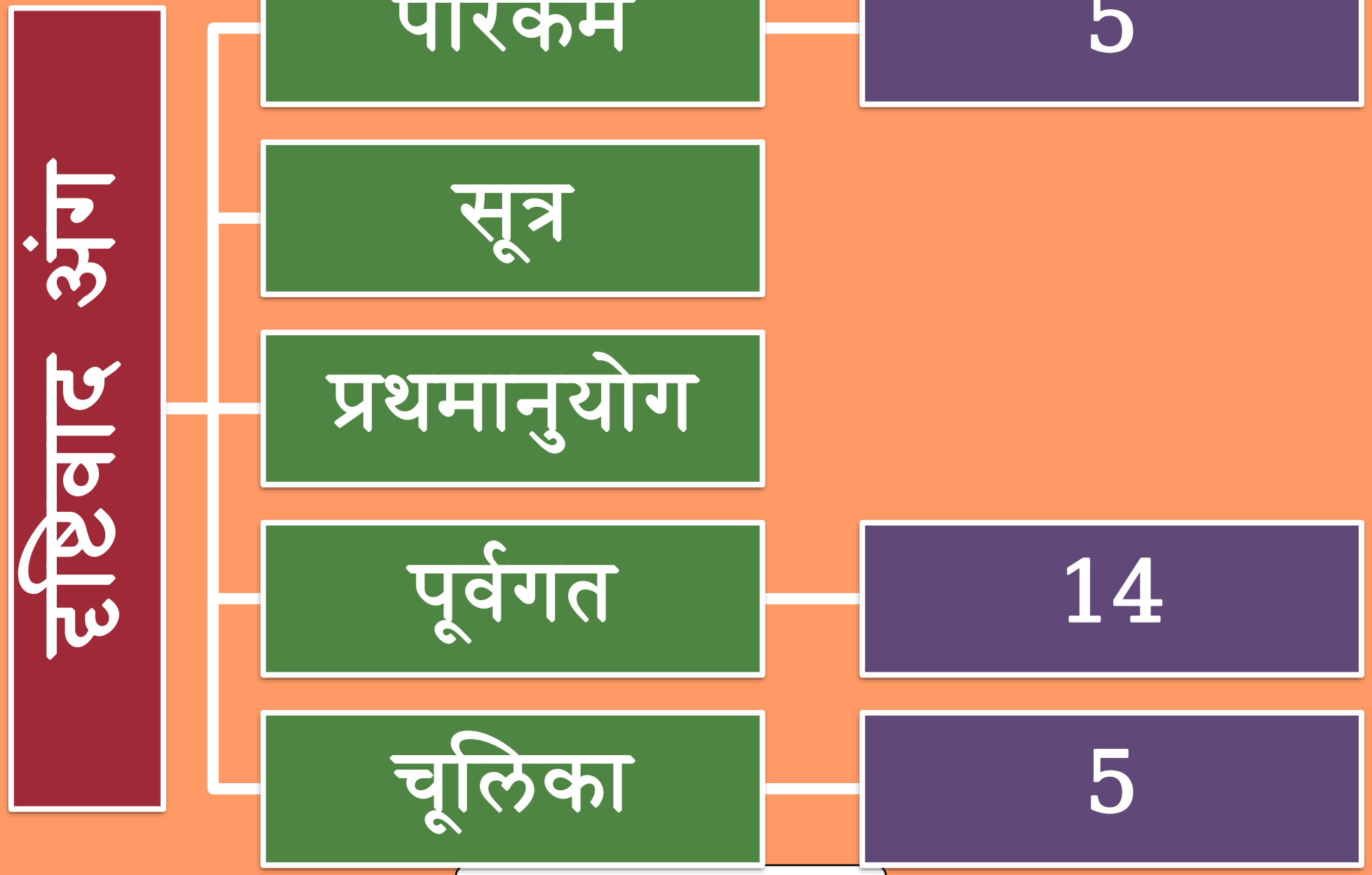

www.JainKosh.org

परिकर्म

चन्द्र-प्रज्ञप्ति

- चन्द्रमा का विमान, आयु, परिवार, ऋद्धि, गति, वृद्धि, हानि, पूर्ण ग्रहण, अर्ध ग्रहण आदि का

सूर्य-प्रज्ञप्ति

- सूर्य की आयु, मण्डल, परिवार, ऋद्धि, गति, दिन की हानि-वृद्धि, किरणों का प्रमाण, प्रकाश तथा ग्रहण आदि का

जम्बूद्वीप-प्रज्ञप्ति

- जम्बूद्वीप स्थित मेरु, कुलाचल, तालाब, क्षेत्र, महानदी, कुण्ड, वेदिका, वनखण्ड, व्यंतरों के आवास

द्वीपसागर-प्रज्ञप्ति

- असंख्यात द्वीपसमुद्र संबंधी स्वरूप, उनमें स्थित भवनत्रिक के आवासों में विद्यमान अकृत्रिम जिन भवनों का

व्याख्या-प्रज्ञप्ति

- रूपी-अरूपी, जीव-अजीव द्रव्यों, भव्य-अभव्य भेदों, उनके प्रमाण और लक्षणों, अनन्तर सिद्ध और परम्परा सिद्धों तथा अन्य वस्तुओं का

www.JainKosh.org

सूत्र

"जीव अस्ति ही है
या नास्ति ही है"
आदि मिथ्यादृष्टियों
के 363 मतों के
पूर्वपक्ष का वर्णन

www.JainKosh.org

प्रथमानुयोग

63 शलाका पुरुषों का अथवा निम्न 12 वंशों का

1. तीर्थंकर	2. चक्रवर्ति	3. विद्याधर	4. नारायण एवं प्रतिनारायण	5. चारण
6. प्रज्ञाश्रमण	7. कुरुवंश	8. हरिवंश	9.इक्ष्वाकुवंश	10. काश्यपवंश
11. वादियों का वंश	12. नाथवंश			

www.JainKosh.org

चूलिका

जलगता	स्थलगता	मायागता	रूपगता	आकाशगता

निम्न के कारणभूत मन्त्र, तंत्र, तपश्चरण आदि का वर्णन

जल में गमन, जल का स्तम्भन, अग्नि का स्तम्भन, भक्षण, अग्नि पर बैठना, अग्नि में प्रवेश	मेरु, कुलाचल, भूमि में प्रवेश करने, शीघ्र गमन आदि	मायावीरूप, इन्द्रजाल (जादूगरी), विक्रिया	सिंह, हाथी, घोड़ा आदि के रूप बदलने	आकाश में गमन करने

www.jainkosn.org

गतनम मनगं गोरम, मरगत जवगातनोननं जजलक्खा।
मननन धममननोनन-नामं रनधजधरानन जलादी॥363॥
याजकनामेनानन-मेदाणि पदाणि होंति परिकम्मे।
कानवधिवाचनानन-मेसो पुण चूलियाजोगो॥364॥

- अर्थ - क्रम से चन्द्रप्रज्ञप्ति में 36,05,000, सूर्यप्रज्ञप्ति में 5,03,000, जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति में 3,25,000, द्वीपसागरप्रज्ञप्ति में 52,36,000, व्याख्याप्रज्ञप्ति में 84,36,000 पद हैं।
- सूत्र में 88,00,000 पद हैं। प्रथमानुयोग में 5000 पद हैं। चौदह पूर्वों में 95,50,00,005 हैं।
- पाँचों चूलिकाओं में से प्रत्येक में 2,09,89,200 हैं। चन्द्रप्रज्ञप्ति आदि पाँच प्रकार के परिकर्म के पदों का जोड़ 1,81,05,000 है। पाँच प्रकार की चूलिका के पदों का जोड़ 10,49,46,000 है ॥363-364॥

www.JainKosh.org

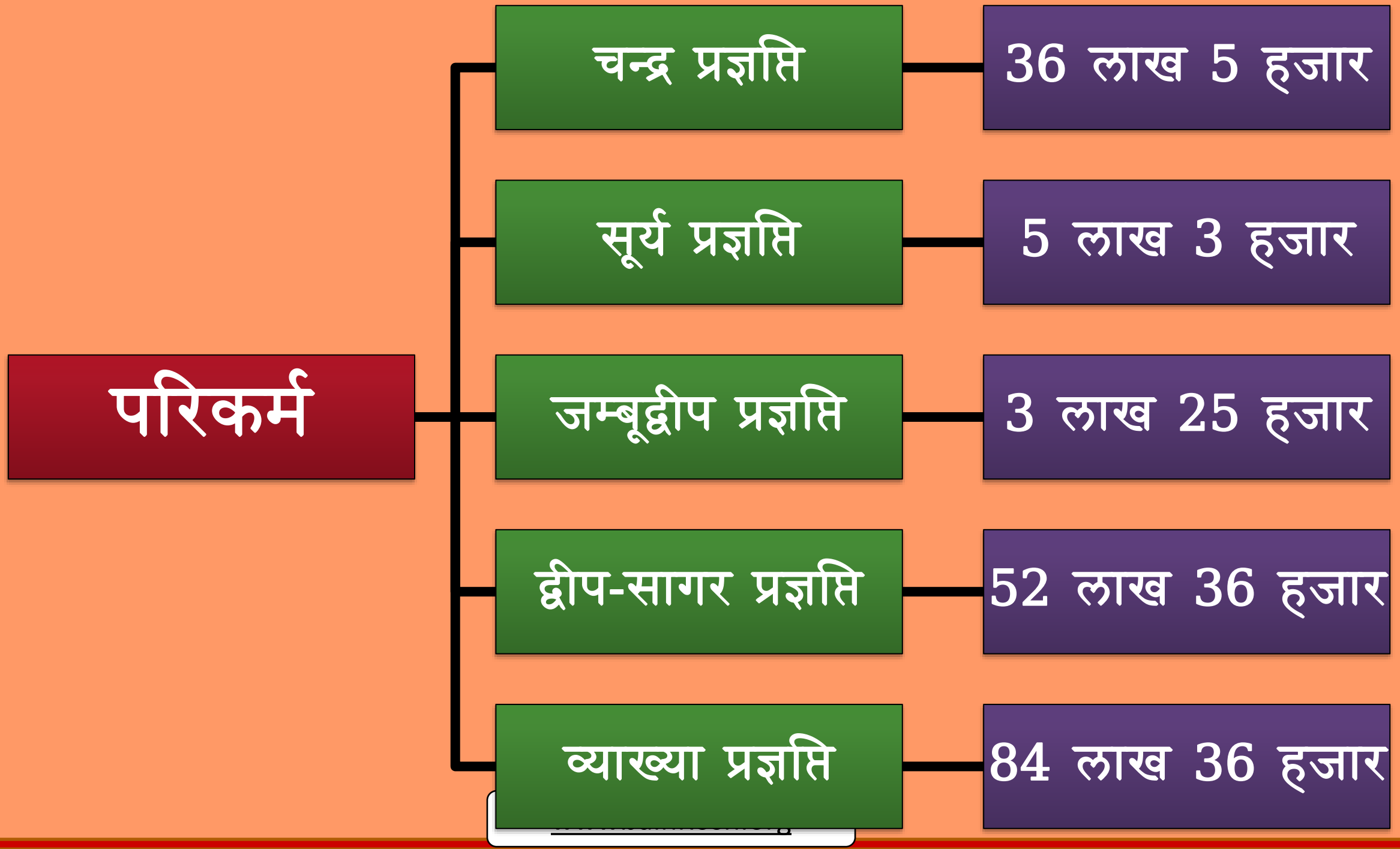
परिकर्म
चन्द्र प्रज्ञप्ति
36 लाख 5 हजार
सूर्य प्रज्ञप्ति
5 लाख 3 हजार
जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति
3 लाख 25 हजार
द्वीप-सागर प्रज्ञप्ति
52 लाख 36 हजार
व्याख्या प्रज्ञप्ति
84 लाख 36 हजार

सूत्र	88 लाख पद	
प्रथमानुयोग	5 हजार पद	
चूलिका	जलगता	2,09,89,200
	स्थलगता	2,09,89,200
	मायागता	2,09,89,200
	रूपगता	2,09,89,200
	आकाशगता	2,09,89,200

www.JainKosh.org

पण्णट्ठुदाल पणतीस, तीस पण्णास पण्ण तेरसदं।
णउदी दुदाल पुव्वे, पणवण्णा तेरससयाइं॥365॥
छस्सयपण्णासाइं, चउसयपण्णास छसयपणुवीसा।
विहि लक्खेहि दु गुणिया, पंचम रूऊण छज्जुदा छट्ठे॥366॥

- अर्थ - उत्पादपूर्व आदि 14 पूर्वों के पदों की संख्या लाने के लिए निम्न प्रत्येक संख्या को दो लाख से गुणा करना चाहिए - उत्पादपूर्व की 50, आग्रायणीय 48, वीर्यप्रवाद 35, अस्तिनास्तिप्रवाद 30, ज्ञानप्रवाद 50, सत्यप्रवाद 50, आत्मप्रवाद 1300, कर्मप्रवाद 90, प्रत्याख्यान 42, विद्यानुवाद 55, कल्याणवाद 1300, प्राणवाद 650, क्रियाविशाल 450, त्रिलोकबिन्दुसार 625 ।
- विशेष यह है कि पाँचवें पूर्व की संख्या निकालने के लिये लब्ध में से एक कम कर देना चाहिये और छट्ठे पूर्व का प्रमाण जानने के लिये छह जोड़ देने चाहिये ॥365-366॥

www.JainKosh.org

14 पूर्व

1. उत्पाद	• वस्तु के उत्पाद, व्यय, ध्रौव्य आदि अनेक धर्मों का वर्णन
2. आग्रायणीय	• द्वादशांग में प्रधानभूत 700 सुनय और दुर्नय का और 7 तत्त्व, 9 पदार्थ, 6 द्रव्य आदि का वर्णन
3. वीर्यप्रवाद	• आत्मवीर्य, परवीर्य, उभयवीर्य, बलवीर्य, तपोवीर्य, गुणवीर्य, पर्यायवीर्य आदि अनेक प्रकार के वीर्य (सामर्थ्य) का वर्णन
4. अस्तिनास्ति प्रवाद	• स्यादस्ति, स्याद् नास्ति आदि सप्तभंगी का वर्णन

www.JainKosh.org

5.ज्ञानप्रवाद

- 5 ज्ञान व 3 कुज्ञान के स्वरूप, संख्या, विषय, फल का वर्णन

6.सत्यप्रवाद

- वचन गुप्ति, वचन संस्कार के कारण, वचन के प्रयोग, 12 प्रकार की भाषा, बोलने वाले जीवों के भेद, बहुत प्रकार के असत्य वचन, 10 प्रकार के सत्य वचन आदि का वर्णन

7.आत्मप्रवाद

- "जीव वेत्ता, विष्णु, भोक्ता, बुद्ध आदि है"—इस रूप से आत्मा का वर्णन

8.कर्मप्रवाद

- कर्म का वर्णन

9. प्रत्याख्यान

- पुरुष के संहनन, बल, द्रव्य, भाव आदि की अपेक्षा से सदोष वस्तु का । काल की मर्यादा सहित अथवा यावज्जीवन त्याग, उपवास विधि, उसकी भावना, 5 समिति, 3 गुप्ति आदि का वर्णन

10. विद्यानुवाद

- 700 अल्प विद्या, 500 महाविद्या, 8 निमित्त ज्ञान का वर्णन

11. कल्याणवाद

- 63 शलाका पुरुषों के गर्भावतरण कल्याण आदि महोत्सवों का, उनके कारणभूत 16 कारण भावना, तपश्चरणादि क्रिया । चन्द्रमा सूर्य ग्रह नक्षत्र इनका गमन विशेष, ग्रहण, शकुन फल आदि का वर्णन

12. प्राणवाद

- शरीर चिकित्सा आदि अष्टांग आयुर्वेद, भूमिकर्म, विष विद्या, प्राणायाम आदि के भेद-प्रभेदों का वर्णन

13. क्रिया-विशाल

- लेखन आदि 72 कला, स्त्रियों के 64 गुण, शिल्पादि विज्ञान गर्भाधानादि 84 क्रिया, सम्यग्दर्शनादि 108 क्रिया, देववंदनादि क्रिया, नित्य नैमित्तिक क्रिया का वर्णन

14. त्रिलोकबिन्दुसार

- तीन लोक का स्वरूप, गणित, मोक्ष का स्वरूप, मोक्ष को ले जाने वाली क्रिया एवं मोक्षसुख आदि का वर्णन

क्र.	पूर्व	गुण्य	गुणकार	प्रमाण
1	उत्पाद	50	2,00,000	100,00000 = 1 करोड़
2	आग्रायणीय	48	"	96,00000 = 96 लाख
3	वीर्यप्रवाद	35	"	70,00000 = 70 लाख
4	अस्ति-नास्ति प्रवाद	30	"	60,00000 = 60 लाख
5	ज्ञानप्रवाद	50	"	1 करोड़ – 1 पद
6	सत्यप्रवाद	50	"	1 करोड़ + 6 पद
7	आत्मप्रवाद	1300	"	26,00,00000 = 26 करोड़
8	कर्मप्रवाद	90	"	1 करोड़ 80 लाख
9	प्रत्याख्यान	42	"	84 लाख
10	विद्यानुवाद	55	"	1 करोड़ 10 लाख
11	कल्याणवाद	1300	"	26 करोड़
12	प्राणवाद	650	"	13 करोड़
13	क्रियाविशाल	450	"	9 करोड़
14	त्रिलोकबिन्दुसार	625	"	12 करोड़ 50 लाख
कुल		4775	× 2,00,000	95 करोड़ 50 लाख 5

सामइयचउवीसत्थयं तदो वंदणा पडिक्कमणं ।
वेणइयं किदियम्मं, दसवेयालं च उत्तरज्झयणं ॥ 367॥
कप्पववहारकप्पा-कप्पिय-महकप्पियं च पुंडरियं ।
महपुंडरीयणिसिहियमिदि चोद्दसमंगबाहिरयं ॥ 368॥

- अर्थः सामायिक, चतुर्विंशति-स्तव, वंदना, प्रतिक्रमण, वैनयिक, कृतिकर्म, दशवैकालिक, उत्तराध्ययन, कल्प्यव्यवहार, कल्प्याकल्प्य, महाकल्प्य, पुंडरीक, महापुंडरीक, निषिद्धिका - ये अंगबाह्यश्रुत के चौदह भेद हैं ॥367-368॥

www.JainKosh.org

अंगबाह्य श्रुतज्ञान - 14 भेद

सामायिक	चतुर्विंशति स्तव	वंदना	प्रतिक्रमण	वैनयिक
कृतिकर्म	दशवैकालिक	उत्तराध्ययन	कल्प्यव्यवहार	कल्प्याकल्प्य
महाकल्प्य	पुंडरीक	महापुंडरीक	निषिद्धिका	

www.JainKosh.org

सामायिक	• नाम, स्थापनादि छह भेदों द्वारा समताभाव के विधान का वर्णन
चतुर्विंशति स्तव	• 24 तीर्थंकरों के नाम, संस्थान, ऊँचाई, पंच महाकल्याणक, 34 अतिशयों का स्वरूप एवं तीर्थंकरों की वंदना की विधि,सफलता का वर्णन
वंदना	• एक तीर्थंकर के अवलम्बन से प्रतिमा, चैत्यालय इत्यादिक की स्तुति का वर्णन

www.JainKosh.org

प्रतिक्रमण

- दु:षमादि काल और 6 संहननों से युक्त स्थिर तथा अस्थिर स्वभाव वाले पुरुषों का आश्रय लेकर दैवसिक, रात्रिक आदि 7 प्रकार के प्रतिक्रमणों का वर्णन

वैनयिक

- दर्शनविनय, ज्ञानविनय आदि 5 प्रकार की विनयों का वर्णन

कृतिकर्म

- पंच परमेष्ठी की पूजा आदि विधि का वर्णन

दशवैकालिक

- दशवैकालिकों (विशिष्ट काल में होने वाली विशेषता) का एवं मुनियों की आचार विधि और गोचर विधि का वर्णन

www.JainKosh.org

उत्तराध्ययन	• "4 प्रकार के उपसर्गों को कैसे सहन करना चाहिये ?" आदि प्रश्नों के उत्तरों का वर्णन
कल्प्यव्यवहार	• साधुओं के योग्य आचरण का एवं अयोग्य आचरण के होने पर प्रायश्चित्त विधि का वर्णन (कल्प्य=योग्य, व्यवहार=आचार)
कल्प्याकल्प्य	• द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव की अपेक्षा मुनियों के लिए योग्य और अयोग्य का वर्णन
महाकल्प्य	• काल और संहनन का आश्रय कर साधुओं के योग्य द्रव्य और क्षेत्रादि का वर्णन

www.JainKosh.org

पुंडरीक

- 4 प्रकार के देवों में उत्पत्ति के कारणरूप दान, पूजा, तपश्चरण, अकामनिर्जरा, सम्यग्दर्शन और संयम आदि कार्यों का वर्णन

महापुंडरीक

- समस्त इन्द्र और प्रतीन्द्रों में उत्पत्ति के कारणरूप तपोविशेषादि आचरण का वर्णन

निषिद्धिका

- प्रमादजन्य दोषों के निराकरण करनेरूप बहुत प्रकार के प्रायश्चित्तों का वर्णन

www.JainKosh.org

सुदकेवलं च णाणं, दोण्णिवि सरिसाणि होंति बोहादो ।
सुदणाणं तु परोक्खं, पच्चक्खं केवलं णाणं ॥ 369 ॥

- अर्थः ज्ञान की अपेक्षा श्रुतज्ञान तथा केवलज्ञान दोनों ही सदृश हैं । परन्तु दोनों में अन्तर यही है कि श्रुतज्ञान परोक्ष है और केवलज्ञान प्रत्यक्ष है ॥369॥

www.JainKosh.org

श्रुतज्ञान का माहात्म्य

	असमानता	समानता
श्रुतज्ञान	परोक्ष	* दोनों सम्यग्ज्ञान हैं * दोनों 6 द्रव्यों को जानते हैं
केवलज्ञान	प्रत्यक्ष	

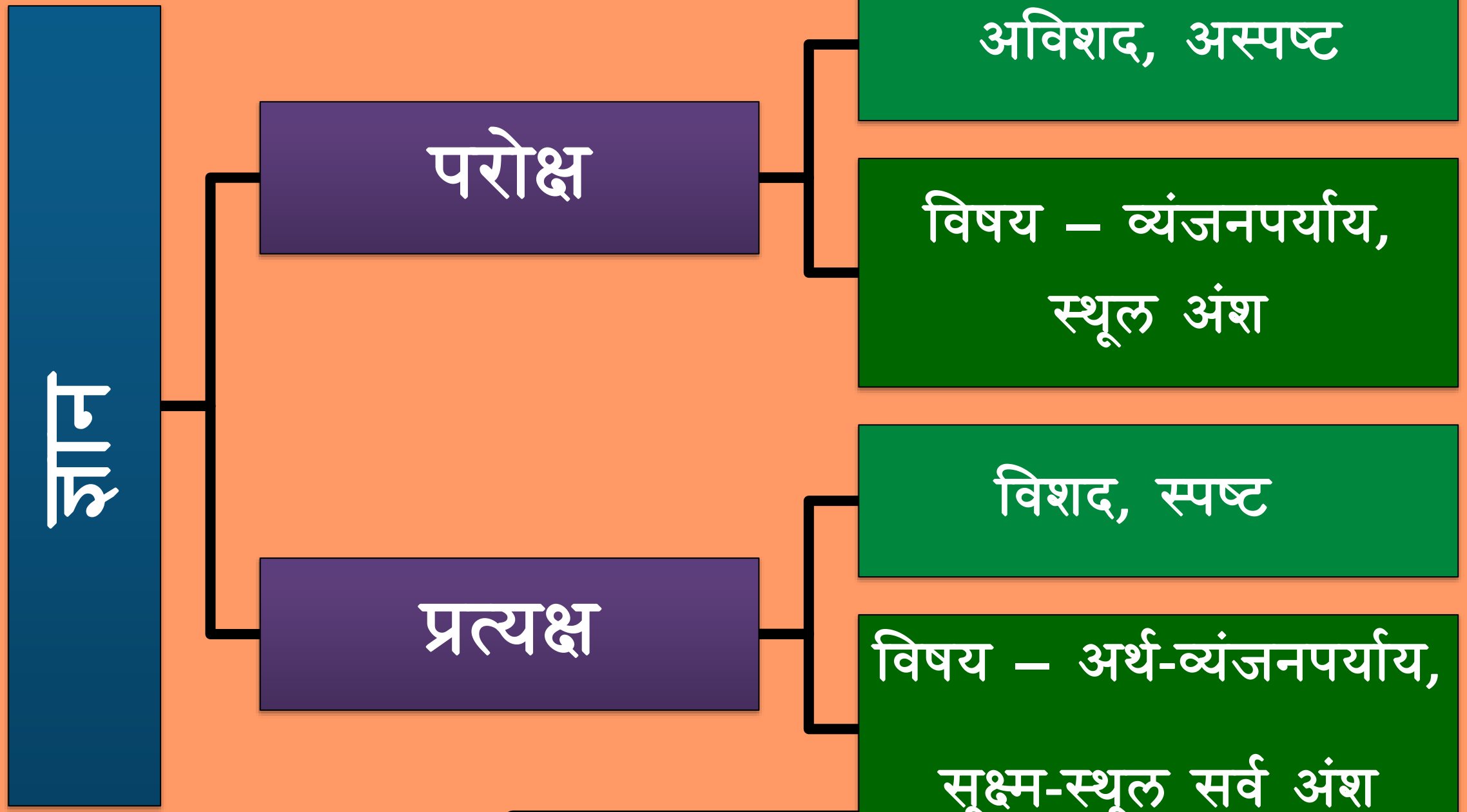

www.JainKosh.org

- Reference : गोम्मटसार जीवकाण्ड, सम्यग्ज्ञान चंद्रिका, गोम्मटसार जीवकांड रेखाचित्र एवं तालिकाओं में
- Presentation created by : Smt. Sarika Vikas Chhabra
- For updates / feedback / suggestions, please contact
  - Sarika Jain, sarikam.j@gmail.com
  - ☎: 94066-82889
  - www.jainkosh.org